हास-परिहास

शिष्ट, सामाजिक हास्य, तीखे व्यंग, चुभते कटाक्ष
से ओतप्रोत कहानियों, एकांकियों
और स्कैचों का संग्रह

लेखक
अरुण, एम० ए०

१९५८
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली-६

●

प्रकाशक
रामलाल पुरी
संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट
दिल्ली-६

●

मुद्रक
निष्काम प्रेस
मेरठ

●

मूल्य तीन रुपये

विषय-सूची

नींबू-निचोड़

मोहन के घर गये। खाना था। वहां एक टिफिनदान देखा। इतना बड़ा था कि पूछ ही लिया— क्या मौहल्ले वालों का खाना साथ जाता है। पता चला कि वह कुकर है। स्वयं खाना पकाने वाला। रसोई में रॉबोट। नारी का पति से भी बढ़ कर मित्र।

बस, उस कुकर ने हृदय को हुक कर (फांस कर) मन को बुक कर लिया।

अगले दिन ही मैं और नमिता प्रसिद्ध दुकान छज्जूमल पारसमल पर पहुंचे, जो सेकिण्ड हैण्ड को नई कर बेचती थी और नई तो ख़ैर नई थी ही। वह दुकान सचमुच पारस थी जहां पहुँचते ही मेरठ में बनी चीज़ें हैज़लीन स्नो, ओटीन क्रीम, पार्कर क्विंक आदि बन जाती थीं।

किन्तु उसका मालिक जान पहचान का था। हमारा हमदर्द था, क्योंकि हम उसकी दुकान से सामान ख़रीद कर उसकी दुकान चला रहे थे।

"नमस्ते जी! आइये जी।"

"नमस्ते।"

"आज तो बहुत दिनां बाद दर्शन दिये जी। सेवा जी!"

मैंने नमिता की ओर देखा और नमिता ने मेरी ओर। फिर मैंने उनकी ओर रुख करके कहा, "हमें एक कुकर चाहिये था।"

वह बड़ी गरमाई से बोला, "वाह जी वाह, आपकी चॉयस की दाद देनी पड़ती है। मैं खुद सोच रहा था कि अब तक आप के यहां कुकर गया क्यों नहीं।"

उसने अन्दर की ओर मुख किया और नौकर को घुड़का, "क्यों रामू,

भोलू कहाँ गया ? क्या, सामान बाँध रहा है। और चैन क्या कर रहा है ? बनियान दिखा रहा है। शाबाश, बेटा तो तू ही आ। देख, एक कुकर लाना। फटाफट।"

और इस बातचीत में मैं नमिता के मुख की ओर देखे जा रहा था। वह भी मुझे घुड़क रही थी। किन्तु इस स्टेन गन की बौछार के सामने मेरे साहस ने जवाब दे रखा था।

मालिक मेरी ओर मुड़ा। "चीज़ एक ही है जी। एक साल बाद नौकर की तन्खा बचाने लगे······"

मेरा माथा ठनका। नमिता से नहीं रहा गया। बोली, "देखिये कोई सेकिण्ड हैण्ड दिखाइये।"

वह मुक्त निर्बन्ध हँसी हँसा। "सुनी आपने बहन जी की बात! सची बात है, हम लोग तो घर उजाड़ कर फेंक दें। पर बहन जी, मैं तो स्वयं आपको एक फर्स्ट क्लास चीज़ दिखा रहा हूँ। सेकिण्ड हैण्ड के दामों में नई चीज़। रामू, शाबाश बेटा, वह ले आओ जो मेजर साहब दे गये थे। मैं तो बहन जी आपको वही दिखा रहा था। नये में आने जाने में दाग़ लग सकते हैं, किन्तु वह तो मेजर साहब फैक्ट्री से ख़रीद कर लाये थे। बिल्कुल अछूता है। (धीरे से) बात यह है, उनके नौकर था और वह उस नायाब चीज़ को ऐरे गैरे के हाथ में देना नहीं चाहते थे। ताज्जुब की बात है कि उनका नौकर नहीं भागा। यहां तक कि गरमी आई और चली गई। झख मार कर वह इसे बेच गये। फैक्ट्री पैकिंग में······"

चीज़ सामने आ गई। उसने बड़े प्यार से हाथ में उठाई सहलाई।

हम न हों तो उसकी दुकान कैसे चले। कुकर के मालिक हम हो गये।

अगले सवेरे नमिता ने सबसे नीचे आग जलाई। ऊपर पानी भरा। फिर चावल, फिर दाल। और कुकर सैट कर रख दिया गया। दफ़तर के

समय पता चला चावल में कनी रह गई थी। दाल कच्ची थी। नमिता पर झाड़ पड़ी। उसने दफतर जाने से आधा घण्टा पहले कुकर सैट नहीं किया होगा। बेचारे रॉबोट को समय कम मिला होगा। दुकानदार ने पहले समझा दिया था कि भोजन पकाने में यह आधा घण्टे का समय लेता है।

अगले दिन नमिता ने पांच मिनट का समय बढ़ा दिया। खाना फिर भी कच्चा था। मैंने नमिता को डाटा— उसे घड़ी देखनी नहीं आती। नमिता ने मुझे डाटा— आज जल्दी क्यों तैयार हो गये?

यह तो हल्के फुल्के आक्रमण थे। मुख्य वार तीसरे दिन हुए। नमिता ने कहा, आज उसने एक घण्टा दिया है। उस पर विश्वास न हो तो मैं खुद पकाकर देख सकता हूँ। और नमिता ने हथियार टेक दिये।

मैंने चैलेंज स्वीकार किया। नीचे दाल और ऊपर गोभी डिब्बे में रख कर चढ़ा दी। इतवार था। खाना चढ़ाते चढ़ाते दिमाग़ में भाव भी चढ़ गये और कहानी लिखने बैठ गया। उठा तो एक घण्टा चालीस मिनट बीत गया था। कुकर खोला। दाल के लड्डू बँध गये थे। गोभी नीचे से जल गई थी और ऊपर के, बीच के फूल कच्चे थे। जले की खुशबू पास पड़ौसी भी सूँघ रहे होंगे।

पीछे फिर कर देखा, नमिता खड़ी मुस्करा रही थी। बारूद में आग लग गई। "तुम्हें क्या सुंघाई नहीं दिया?"

वह बोली, "मौहल्ले में भगदड़ पड़ी हुई है। सारी औरतें रसोई में जाकर देख रही हैं और मुण्डेरों से चिल्ला चिल्ला कर सहेलियों को साग देखने को कह रही हैं।"

काश! पुराने ज़माने का रिवाज नहीं रहा। फिर भी सुनाने में बाज़ नहीं आया।

वह मुस्कराती रही। मुझे जानती थी, पहचानती थी। मैं भी जल

गया था। जलन से व्याकुल था। जले टुकड़े जल्दी जल्दी मुख से बाहर फेंक रहा था।

दस मिनट बीत गये। आखिर उससे नहीं रहा गया। नमिता खिल-खिला उठी। मैं झपट कर उठा। वह भागी। पर मैं क्रिकेट में कवर का फील्डर हूँ। खट् से पकड़ लिया।

सच कहता हूँ उसके हँसने पर गाल के गड्ढे जम्बुक की डिबिया बन गये। फिर हम दोनों ने बड़े प्यार से नींबू के अचार से रोटी खाई।

प्रयोग करते करते मास बीत गया। हाथ कुछ साफ हुआ था, पर साथ ही तबीयत भी साफ हो गई थी। कुकर को देखकर जी करता था कि इस बार दशहरे पर घर में रावण जलाऊं।

लेकिन नमिता गृहिणी थी। मुझे साथ लेकर छज्जूमल पारसमल के पहुँची। शुभागमन पर वही स्वागत, वही अभ्यर्थना।

हम दोनों अन्दर पहुँचे। मैंने झेंपते झेंपते अपना मन्तव्य सुनाया। मालिक पहले से भी अधिक गरमाई से बोला, "आपने बड़ा अच्छा किया, मुझे बता दिया। मैं इसका ध्यान रखूंगा। मैं तो पहले सोचता था कि आप दो जने हैं। कुकर के बनाये खाने में क्या मज़ा आ सकता है जो बहन जी के हाथ के खाने में है। अरे भोलू, देखकर आ हमारे यहाँ कितने कुकर हैं। क्या कहा, आठ। आपने सुना, छः नये और दो पुराने। (कुकर को हाथ में घुमा फिरा कर) आपका तो बिल्कुल नया रखा है। (मुस्करा कर) चीज़ें बरतनी तो कोई बहन जी से सीखे।"

मालिक ने एक सांस ली, "रामू, एक नया कुकर ला। आपको दिखाऊंगा कि नया भी आपके पुराने कुकर के सामने पुराना लगता है।"

मेरे और नमिता दोनों के मुख से एक साथ निकला, 'नहीं जी, रहने दें। क्यों तकलीफ करते हैं?"

मालिक बोला, "क्यों, तकलीफ कैसी जी! आपने कैसे प्यार से रखा

है ।" रामू ने नया कुकर लाकर रख दिया। मालिक ने दोनों को पास रख कर सहलाया और विजय-गर्व से हमारी ओर देखा । मानों हमारे संभाल कर रखने पर पुरस्कार उसे मिला हो ।

उसने कुकर हमें वापिस लौटा दिया। "आप इसे घर पर रखिये। इसमें क्या बीच में मैं कुछ खाऊंगा । कोई समझदार आदमी आया तो आप का पता बता दूँगा।"

मैंने प्रतिवाद किया, "नहीं नहीं, आप अपना कमीशन क्यों न लेंगे? क्या आप पर कोई टैक्स लगा है?"

"आप कैसी बातें करते हैं जी। आपसे हम पैसे लेंगे!"

नमिता बीच में बोल उठी, "अच्छा, पैसे मत लीजिये। इसे दुकान पर रख लीजिये।"

"आप भी कैसी बातें करती हैं जी। अगर इस पुराने को मैंने यहां रख लिया तो मेरे पुरानों के दाम तो आधे रह जायेंगे।"

मेरे मुँह से निकल पड़ा, "क्यों?"

"आपने इसे कितने में ख़रीदा था?"

"चालीस में।"

"चालीस में? आपको बड़ा सस्ता मिल गया। मुझे तो पचास ध्यान था। (हँसते हुए) पर आप मुझे पैसे अधिक कब दे सकते हैं? अब आप सोचिये कि यदि इसके चालीस रुपये बताऊंगा तो पुरानों के बीस रुपये से अधिक कौन देगा।"

नमिता ने सलाह दी, "तो आप दोनों को साथ न दिखायें।"

नमिता की बात अनसुनी करके मालिक बोलता रहा, "और आपके घर तो वह अच्छा रखा रहेगा। हमारी दुकान पर! भगवान बचाये इन नौकरों से। एक दिन में इसे भी बीस रुपये वाला बना देंगे।"

मैंने नमिता की ओर देखा, उसने मेरी ओर। आँखों के कोड ने

कहा और सुनाया— "इस कुकर की दाल यहाँ नहीं पकने की। कहीं और चलो।"

दोनों दिल और कुकर लटकाये बाहर निकले। बाहर निकलते ही मैं बोला, "देखा, आखिर में खुला। इसके बीस रुपये देना चाहता था। सौ प्रतिशत लाभ।"

नमिता ने सुझाया, "तो क्या बात है। दुकानें तो बहुत हैं।"

हम दोनों बाज़ार में साइन बोर्ड देखते चले जा रहे थे। 'हमदर्द दुकान— पुरानी चीज़ों को बेचते ख़रीदते हैं।' नाम पढ़कर ही बड़ी सान्त्वना मिली।

नमिता बोली, "तुम जाकर इसे बेच आओ। मैं सामने कपड़े की दुकान पर मिलूँगी।"

मैं धड़कते दिल से अन्दर घुसा। काउण्टर पर खड़े आदमी ने पूछा— कहिये ? जैसे पुलिस स्टेशन पर रपट लिखवाने वाले से पूछा जाता है।

मैंने कुकर काउण्टर पर रख दिया। बोला, "यह कुकर है।"

"अच्छा।"

"बिल्कुल नया सा है।"

"फिर।"

"मैं इसे बेचना चाहता हूँ।"

उसने अन्दर आवाज़ लगाई— "रफीक मियाँ।"

चश्मा पहने एक सज्जन बाहर निकले। उन्होंने चश्मा जो आँख की बजाय नथनों पर लगा रखा था नाक पर ठीक बिठाया। "क्या है साहब ?"

"यह बाबू जी हैं।"

उन्होंने चश्मे में से मुझे घूरा।

"यह कुकर है।"

रफीक मियां ने कुकर को उठाया और उलट पुलट कर देखने लगे। मुझे खुद शक होने लगा कि यह कुकर है भी या नहीं।

रफीक मियां ने सीधे मुझ से सवाल किया, "क्या आप इसे बेचना चाहते हैं?"

जी में आया कह दूँ, नहीं जी मैं चलती फिरती नुमाइश दिखाता फिरता हूँ। किन्तु ज़ब्त कर सिर हिला दिया।

रफीक मियां ने फिर कुकर को ठोक बजाकर देखना आरम्भ किया। "यह आपका है?"

मुझे क्रोध आ गया। "मतलब?"

मेरी लाल आँखों की ओर ध्यान दिये बिना रफीक मियां ने बोलना जारी रखा। "खाँ साहब, यह वह कुकर है जिसे मेजर साहब पाँच मास हुए लाये थे।"

खां साहब ने भी मेरी ओर दयार्द्र नेत्रों से देखा।

मेरा दिल धक् से रह गया। "क्यों?"

"यह केवल नाम का कुकर है।"

और मुझे आशाओं की मृत्यु पर मातम करते छोड़ उन दोनों ने ग़ुसड़ पुसड़ करनी आरम्भ कर दी। मैं भी अन्तिम डाक्टरी फरमान सुनने को खड़ा रहा।

कुछ पल बाद खाँ साहब बोले, "देखिये साहब, यह एक बेकार चीज़ है। फिर भी जब आप आये हैं तो हम इसके पांच रुपये दे सकते हैं।" उन्होंने काउण्टर का दराज़ खोला।

मैंने आग्नेय नेत्रों से उन दोनों की ओर देखा। कुकर खाना ठीक न पका सकता हो, पर इन दोनों नायाब हस्तियों को तो कच्चा पक्का भून सकता है।

बेचारा कुकर घबरा कर मेरे हाथ की शरण आया। मैं बाहर था।

नमिता ने मेरी शक्ल देख कर कुछ न पूछना ही ठीक समझा। हम दोनों बढ़े चले जा रहे थे। नमिता ने साहस न छोड़ा। वह एक अन्य दुकान में घुसी और मुझे भी मन मारे उसका साथ देना पड़ा।

पता नहीं, शुरू में क्या बात हुई। जब दुकानदार ने मेरे हाथ से कुकर लिया, तब मुझे होश आया। "ओह, कितना सुन्दर कुकर है। आप इसे क्यों बेच रहे हैं?"

नमिता ने मुस्करा कर कहा, "इन्हें इसका खाना पसन्द नहीं आता।"

"तभी तो, तभी तो। मैं इसे ज़रूर लूँगा। यह तो चुटकी बजाते निकल जायगा।" दुकानदार ने सन्दूकची खोलकर पन्द्रह रुपये मेरे हाथ में थमा दिये।

मैंने दाँत किटकिटाते हुए कहा, "आपको पता है यह नया कितने का आता है?"

उसने खीसें निपोड़ीं। "अजी, नया तो नया है। फिर दिन पर दिन इसके दाम भी गिरते जा रहे हैं। कम्पनी की नई लिस्ट आई है, कुछ दिनों बाद इसके दाम बीस रुपये कम हो जायेंगे।" गल्ला खोल कर उसने मेरे हाथ पर एक रुपया और रख दिया।

मैंने सधन्यवाद रुपये उसकी मेज़ पर रख दिये।

बाहर निकल कर मैंने नमिता से कहा, "इस वार एक और युक्ति लड़ाता हूँ।"

उसने प्रशंसा भरी दृष्टि से मेरी ओर देख मुझे बढ़ावा दिया।

अगली दुकान में घुसते ही मैंने पूछा—"कुकर है।"

"क्यों नहीं? बमभोले, कुकर लाओ।"

"पुराना चाहिये।"

"हाँ हाँ, सेकिण्ड हैण्ड लीजिये।"

मेरे हाथ में एक कुकर देख कर वह अचम्भित ज़रूर था।

कुकर आया। मैंने अपने कुकर को उसके साथ रखा। हमारा निश्चय ही उससे बढ़िया था। मैंने पूछा, "इसके दाम क्या हैं?"

"दाम की आप क्या चिन्ता करते हैं? पसन्द कर लीजिये।"

"फिर भी।"

"अजी, केवल, चालीस रुपये का है। हमने तो दाम वही पुराने रखे हैं, नहीं तो सरकार की नींबू-निचोड़ नीति ने हमारे व्यवसायों का ढेर कर दिया है। दाम ऐसे अलट-पलट रहे हैं कि हमारा तो दुकान पर बैठे ही खात्मा हो रहा है।"

"चालीस रुपये तो ज़्यादा हैं।"

"ज़्यादा कहां जी। आपके हाथ में तो नया कुकर दिखाई दे रहा है। आप तो स्वयं जानते हैं। कम्पनी की नई लिस्ट आई है। अगला माल जो आने वाला है उस पर सात रुपये दाम बढ़ गये हैं।"

"पर पिछली दुकान पर दाम कम होने की बात थी।"

"बकता है जी। और कोई कम्पनी होती तो पुतली फेर रही होती। यह तो माँग इतनी है कि वह सरकार का झटका सम्भाल गई। ओफ़, कितनी मांग है। पिछले कुछ दिनों में ही दस बेचे हैं और एक दर्जन का आर्डर गया हुआ है। मुनीम जी, जरा इन्डैएट लाना।"

मैंने कहा, "नहीं नहीं, रहने दीजिये। ऐसी माँग है तो आप मेरा भी ले लीजिये। मैं आपको चालीस रुपये में ही दे दूंगा।"

वह एक बार हक्का बक्का रह गया। फिर मुस्करा कर बोला, "आप तो मज़ाक कर रहे हैं। चलिये दो रुपये कम कर दीजिये।"

मैं भी वैसे ही मुस्कराया, "आप ही दो रुपये कम दे दीजिये। देख लीजिये बिल्कुल नया है। मैं सचमुच इसे बेचना चाहता हूँ।"

उसकी रंगीनी लौट आई थी, "भला आपकी बात झूठी हो सकती है। पर साहब, दुकान से बाहर निकलते ही चीज़ पुरानी हो जाती है। उसके दाम चौथाई रह जाते हैं।"

मैंने ज़ोर दिया, 'मैं तो खुद पुराने में बेच रहा हूँ। आपके कुकर से तो इसकी हालत बहुत अच्छी है। चलिये, पैंतीस दे दीजिये।"

उसने परेशान मुख बनाया, "ले तो मैं इसे चालीस में लेता। यह पचास में आसानी से बिक सकता है। पर आजकल मांग इतनी थोड़ी है। यह कुकर जो आप देख रहे हैं पिछले दो साल से दुकान पर रखा है।"

नमिता बीच में बोली, "अभी तो आप मांग बहुत बता रहे थे।"

उसने हँस कर नमिता की बुद्धि पर तरस खाया, "आप समझी नहीं। ... नहीं नहीं, मेरे कहने में गलती रही। नई चीज़ की मांग बहुत है। वह तो गरम मूंगफली की तरह हाथों हाथ बिक जाती है। पर पुरानी पड़ी रहती है।" हमारे कुकर को मेरे हाथ में थमाते हुए वह बोला, "ठीक भी है बहन जी, पुरानी में सौ झगड़े हैं। नई लो तो टंटा शान्त। नया रोये एक बार, पुराना रोये बार बार।"

कुकर मेरे हाथ में दो मन का बोझ बना लटका था। खवे में ऐसा दर्द था जैसा मुझ रविवारीय खिलाड़ी के टूर्नामेण्ट में ३५ ओवर फेंकने तथा आठ विकेट लेने के बाद हुआ था।

बाहर निकलते ही मुझे एक विचार आया। कुकर नमिता को पकड़ाते हुए बोला, "इसे पकड़ना, मैं अभी आया।" स्प्रिंग की तरह छलांग भर में अन्दर था। "आपके पास रंगीन काग़ज़ है?"

"कैसा?"

"पतला। हरे रंग का चाहिये।"

एक शीट मोल लेकर मैं बाहर निकला।

नमिता अचकचा कर मुझे घूर रही थी। "यह क्या ?"

"काग़ज़।"

उसका मुंह बन गया। "मत बताओ।"

"अरे, क्या चालीस रुपये में हम मर गये। इतने तो इस पर कहानी लिख कर मिल जायेंगे। हमने तो पर्याप्त चिन्ता करली। अब जिस शादी में जायेंगे उसी में इसे रंगीन काग़ज़ में लपेट कर भेंट कर देंगे। क्या बात है, एक चिन्ता और सिर पर ले लेगा।"

"अच्छा जी, तो मैं चिन्ता हूँ। घर चलो। बताती हूँ।"

———

यम की अदालत

[यमराज की अदालत लगी है। जज की कुर्सी पर यमराज विराजमान हैं। सामने दाहिने हाथ पर चित्रगुप्त बैठा है। दो यमदूत एक मृत आत्मा को पकड़े खड़े हैं। द्वार पर तीन चार चर खड़े हैं।]

यमराज— (**भयानक हँसी हँसते हुए**) तो तेरे गुणों की व्याख्या सुन ली। भारत को इसने नरक से स्वर्ग बना दिया। ठीक! डाल दो इसे कुम्भीपाक नरक में। देखें यह उसे भी कब स्वर्ग में बदल डालता है।

('दुहाई, दुहाई' के क्रन्दन में यमदूत उस व्यक्ति को घसीट कर ले जाते हैं।)

(नेपथ्य में कोई चीज़ गिरने की आवाज़। एक भयंकर करुणोत्पादक चीख़)

यमराज— चित्रगुप्त, आज और कोई केस है?

चित्रगुप्त— महाराज, कई केस हैं।

यमराज— बात क्या है? लाखों केस आ रहे हैं और वह भी अधिकतर भोले भाले व्यक्तियों के! नरक खाली होने लगे हैं और बाकी जगह भीड़ है।

चित्रगुप्त— महाराज, ज़रूर कोई धूर्ताधिराज पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ है जो इन सीधे सादे व्यक्तियों को लड़ा कटा कर अपना उल्लू सीधा कर........

(हड़बड़ाता हुआ एक यमदूत आता है।)

यमदूत— महाराज, दुहाई है। आपके राज्य में एक मनुष्य ने अनर्थ मचा रखा है जो अपने आपको भगवान का कल्कि अवतार बताता है।

(तभी दूसरा दूत स्वप्नभर दिखाई देता है। वह तख्त के नीचे खड़ा होकर ज़ोर ज़ोर से सांस लेने लगता है।)

चित्रगुप्त— (**तीखे स्वर से**) क्या बात है स्वप्नभर! हांफ क्यों रहे हो?

(**स्वप्नभर अब भी कुछ कहने लायक नहीं होता।**)

यमराज— (**गरज कर**) बोलता क्यों नहीं मूर्ख?

स्वप्नभर— (**टूटे सांस से**) दयानिधान, क्षमा करो। मैं तो फौरन भागा चला आ रहा हूँ आपको खबर सुनाने। देखिये महाराज, मेरा सांस कितना फूल रहा है?

चित्रगुप्त— आखिर खबर क्या है?

स्वप्नभर— महाराज, कल रात मैं उस आदमी के पास गया जो आपके राज्य में गड़बड़ मचा रहा है। मैंने उसे डाटा कि वह बीच में न बोले, हमारे महाराज यमराज बड़े बलशाली हैं, चुटकी बजाते बजाते उसे पीस कर रख देंगे। यह सुनकर वह खिलखिला कर हँसा और बोला— तुम्हारे महाराज का अभी मुरदों से पाला पड़ा है, मरदों से नहीं, तभी फूली फूली चुग रहे हैं।

(चित्रगुप्त बेहोश होने लगता है। यमराज गरज उठते हैं। स्वप्नभर आँख बन्द कर 'यम, यम' जपने लगता है।)

यमराज— कौन है यह नालायक?

पहला दूत— महाराज, इसका नाम तो पता नहीं, पर यह राजनीतिज्ञ के नाम से विख्यात है।

यमराज— **(चिल्लाकर)** धड़कनबन्द !

(द्वार पर खड़े चरों में से धड़कनबन्द अन्दर आता है। वह झुक कर नमस्कार करता है ।)

यमराज— जा, फौरन मर्त्यलोक में जा और इस मुँहफट को दस सेकेण्ड में मेरे सामने लाकर उपस्थित कर ।

(धड़कनबन्द के जाते ही अदालत में सन्नाटा छा जाता है। चित्रगुप्त चैतन्य हो अपनी फाइलें पलटने लगता है। वह तीसरी फाइल का एक पेज खोलकर अपने सामने रख लेता है। उसी क्षण धड़कनबन्द राजनीतिज्ञ को साथ लेकर लौट आता है।

धड़कनबन्द—**(झुककर नमस्कार करता है)** महाराज, अपराधी उपस्थित है ।

राजनीतिज्ञ— **(मुस्कराकर)** यह अदालत तो हमारे देश की अदालतों जैसी है। **(यकायक खिलखिला कर हँस पड़ता है ।)**

(यमराज के क्रोध से व्याकुल हो दांत पीसने की ध्वनि सुनाई देती है । चित्रगुप्त हक्का बक्का हो यमराज के मुंह को ताकता है, फिर संभल कर राजनीतिज्ञ की ओर मुड़ता है ।)

चित्रगुप्त— ए राजनीतिज्ञ। फौरन अपने हँसने का कारण बताओ, नहीं तो अदालत की मानहानि के दण्डस्वरूप एक मास का रौरव नरक तुम्हारे दण्ड में जुड़ जायगा ।

राजनीतिज्ञ— **(हँसते हँसते)** दोनों अदालतों का मिलान करने पर मुझे एक मज़ेदार घटना याद आ गई। अपने यहाँ एक अदालत की बात है। मैं सवेरे जब वहाँ पहुंचा तो जज नहीं आया था। मे रेसे पहले आने वाले के सामने चपरासी ने हाथ फैला रखा था। वह भला आदमी कह रहा था, 'कल ही तो तुम्हें दो रुपये दिये थे ।' चपरासी

बोला, 'बाबू जी, गलती हो गई। पर आज सबसे पहले आपके आगे हाथ फैलाया है कुछ तो दीजिये। आपके पास अठन्नी होगी?' फिर भी ना नुकुर करते देख चपरासी ने अमोघ वाण छोड़ा, 'अच्छा बाबू जी, आप मेरे हाथ पर थूक दीजिये। वोहनी के समय मैं हाथ खाली वापिस नहीं लूँगा।' और आपके यहाँ दस दस जमदूत खड़े हैं, फिर भी किसी ने हाथ नहीं पसारा। यही कमी है आपके यहां।

यमराज— **(गरजकर)** बस, चुप रहो, बकवास बन्द करो।

राजनीतिज्ञ— **(झुंझलाकर)** न सुनाओ तो रौरव नरक मिले, सुनाओ तो गाली मिले।

यमराज— **(अनसुनी कर)** चित्रगुप्त, अपराधी के आरोप पढ़ कर सुनाओ।

चित्रगुप्त— महाराज, सारे आरोप सुनाने तो असम्भव हैं।

यमराज— क्यों?

चित्रगुप्त— अधिकता के कारण। अपराधी का सार्वजनिक जीवन चौबीस वर्ष का है। एक वर्ष में ३६५ दिन होते हैं। हर सप्ताह चार अपराध का औसत आता है। आठ से भाग देने पर दो दिन में एक अपराध निकला। सो समस्त अपराध सुनाने में मुझे तीन दिन ग्यारह घण्टे पैंतीस मिनट लगेंगे।

राजनीतिज्ञ— माई लार्ड, मैं एक प्रार्थना करना चाहता हूं।

यमराज— क्या?

राजनीतिज्ञ— मुझे यह जानकर बड़ा दुख हुआ कि स्वर्ग-नरक के द्वार पर भी एक के सौ लगाये जाते हैं। मैं हर आरोप का उत्तर देने की अनुमति चाहता हूँ।

यमराज— राजनीतिज्ञ। यह अपराध चित्रगुप्त के लगाये नहीं हैं। ये सब

सत्य हैं और समय समय पर तुम्हारी आत्मा से टेलीप्रिन्टर द्वारा चित्रगुप्त की बही में टाइप हुए हैं।

राजनीतिज्ञ— बड़ी अजीब बात है। मेरे विचार से तो मैंने एक ही अपराध किया और वह है जनता की सेवा का। यदि मैं अपनी सेवा करता ....

यमराज— आर्डर, आर्डर।

(शान्ति छा जाती है।)

यमराज— चित्रगुप्त, इसके अपराध कहीं कहीं से पढ़ कर सुनाओ।

चित्रगुप्त— मां से झूठ बोला, पिता से झूठ बोला, पत्नी से झूठ बोला, भाई से झूठ बोला, बहनोई से झूठ बोला, चाचा से झूठ बोला ......

यमराज— (**तंग आकर**) पृष्ठ पलटो।

चित्रगुप्त— साथी को धोखा दिया, गुरु को धोखा दिया। (**पृष्ठ पलटता है**) पत्नी के ज़ेवर बेचे। उसे भूखा मारा। (**दूसरा पृष्ठ**) विपक्षी को लाठी से पिटवाया। (**अन्य पृष्ठ**) गलत बात पर हड़ताल करवाई। (**काफी पलट कर**) बारह स्त्रियों के साथ रहा। (**दो पृष्ठ पीछे उलट कर**) जनता को धोखा देकर उसका धन खा गया।

यमराज— बस, बस! काफी है! यह तो सब नरकों का अधिकारी है।

राजनीतिज्ञ— महामहिम, मैं अपने बचाव में कुछ कहना चाहता हूँ।

यमराज— कहो, पर आरोपों की सत्यता के बारे में न हो।

राजनीतिज्ञ— नहीं माई लार्ड! मैं इन सब आरोपों को सत्य स्वीकार करता हूँ। पर यह सब परिस्थितिवश होता है। मैंने जनता की हानि क्या की? उसे नई सड़कें दीं ....

चित्रगुप्त— अपने लिये चांदी की सड़क बनाकर।

राजनीतिज्ञ— पानी दिया······

चित्रगुप्त— **(फिर बात काट कर)** अपने लिये दूध की नहर बहाकर।

राजनीतिज्ञ— **(झुंझलाकर)** बिजली दी, लोहा कोयला दिया, रहने का सामान दिया अर्थात् सब कुछ दिया।

चित्रगुप्त— रोटी, कपड़े और मकान के अतिरिक्त।

राजनीतिज्ञ— शट अप! **(क्रोध में कांपते हुए)** महामहिम, अपने पेशकार को चुप कराइये। **(कुछ थमकर)** मतलब यह है मैंने जनता को जीवन दिया।

चित्रगुप्त— कुत्ते··· **(फिर राजनीतिज्ञ की लाल आंखें देकर चुप हो जाता है।)**

राजनीतिज्ञ— और परिस्थितियों पर किसका वश चलता है। विष्णु ने मोहिनी रूप धर कर दानव रूपी जनता को धोखा दिया और उनका अमृत छीन लिया। राम ने छिप कर बालि को मारा। युधिष्ठिर ने झूठ बोला।

चित्रगुप्त— महाराज, इसे बोलने मत दीजिये। इसकी बोली में सम्मोहन शक्ति है। इसी के बल पर यह सब का उल्लू बनाता है। तभी यह हर समय बोलता रहता है। महाराज, यह आपको भी बहका लेगा।

राजनीतिज्ञ— **(अपनी बड़ाई सुनकर मुस्कराता है)** इन्द्र ने ऋषि-पत्नी के साथ सम्भोग किया। चन्द्रमा ने गुरु-पत्नी को नहीं छोड़ा। और आप— आप भी तो एक बार अपनी बहन यमी के साथ सहवास करने को तत्पर थे।

यमराज— **(गरजकर)** चुप रह बकवादी, मुंहफट! **(पसीना पोंछते हैं)** चित्रगुप्त, इसके लिये सब दण्ड थोड़े हैं।

चित्रगुप्त— महाराज, इसे सब नरकों में पाप भोगने दें।

यमराज— मतलब इसे एक एक साल हर नरक में रहने को भेजें।

चित्रगुप्त— नहीं महाराज, एक एक साल तो बहुत है। इतने में यह वहां भी सभा, सोसायटी, मज़दूर संघ बना कर व्यवस्था विशृङ्खल कर डालेगा। इसका हर रोज़ तबादला होना चाहिये।

राजनीतिज्ञ— यौर ऑनर! मेरे ऊपर निर्णय घोषित करने से पहले यह पत्र और पढ़ लें। मैं पहले जानता था अदालतों की धांधलेबाज़ी को। मेरी बात पूरी सुनी नहीं और दण्ड देने लगे। मैं अपनी सफाई में तीन दिन ग्यारह घन्टे पैंतीस मिनट क्या एक मास तक बोल सकता था।

(चित्रगुप्त राजनीतिज्ञ से पत्र लेकर यमराज को दे देता है। यमराज उसे पढ़ कर सोच में पड़ जाते हैं।)

यमराज— यह पत्र तुम्हें किसने दिया?

राजनीतिज्ञ— भगवान विष्णु ने। आप नीचे ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों के हस्ताक्षर पायेंगे।

चित्रगुप्त— **(उत्कण्ठा से)** महाराज, इसमें क्या लिखा है?

यमराज— **(पढ़ते हुए)** 'पत्र-वाहक मेरा सच्चा भक्त है। इसे स्वर्ग में सुन्दर से सुन्दर स्थान दें।' यह तो सर्वोच्च न्यायालय की पूरी बेंच का निर्णय लाया है।

चित्रगुप्त— तो फिर महाराज?

(राजनीतिज्ञ विजय-गर्व से सब की ओर देखता है। तभी बाहर से एक चर का स्वर सुनाई पड़ता है।)

चर— सावधान! भगवान विष्णु पधार रहे हैं।

(यमराज और चित्रगुप्त फौरन कुर्सी छोड़ देते हैं। राजनीतिज्ञ भी व्याकुल दिखाई देता है। विष्णु आकर यमराज की कुर्सी पर बैठ जाते हैं। यमराज और चित्रगुप्त खड़े रहते हैं।)

विष्णु— कहो यमराज, व्याकुल कैसे दिखाई दे रहे हो?

यमराज— **(चित्रगुप्त की ओर देखकर)** नहीं भगवन्।

विष्णु— क्या कर रहे थे? अपना काम चालू रखो।

यमराज— भगवन्, यह एक महापापी मर्त्यलोक से आया है। इसके ऊपर विचार कर रहा था।

विष्णु— इसने क्या पाप किया है?

चित्रगुप्त— त्रिलोकपति, संसार में कोई पाप ऐसा नहीं है जो इसने किया न हो।

विष्णु— फिर!

यमराज— भगवन्, मैं इसे नरकाग्नि में डालने का दण्ड देने जा रहा था कि इसने आपका एक पत्र दिखाया।

विष्णु— मेरा पत्र! कहाँ, देखूं!

यमराज— यह लीजिये। **(पत्र हाथ में पकड़ा देते हैं।)**

(विष्णु भी पत्र पढ़कर सोच में पड़ जाते हैं।)

विष्णु— अपराधी, यह पत्र तुम्हें कहाँ से मिला?

राजनीतिज्ञ— भगवन्, आपने ही यह पत्र मुझे दिया था।

विष्णु—मैंने! **(सिर पर हाथ फेर कर)** मुझे तो याद पड़ता नहीं। कब दिया था?

राजनीतिज्ञ— यह मुझे याद नहीं। काफी दिन की बात है।

विष्णु— देखो याद करता हूँ। 'पत्रवाहक मेरा सच्चा भक्त है। इसे स्वर्ग में सुन्दर से सुन्दर स्थान दें।' स्वर्ग में ··· सुन्दर ··· से सुन्दर ··· स्थान दें। **(मुख पर क्रोध छा जाता है)** यह पत्र जाली है। मैंने इसे नहीं लिखा है। सुन्दर से सुन्दर मैं कभी नहीं लिखता। स्वर्ग सारा एक समान है। और फिर सब वहाँ स्वाधीन हैं। जिसे जो स्थान सुन्दर लगे जा सकता है।

(यमराज, चित्रगुप्त और राजनीतिज्ञ तीनों भय से काँप उठते हैं।)

विष्णु— **(कड़क कर)** चार सौ बीस, मर कर भी जालसाज़ी।

राजनीतिज्ञ— **(हाथ जोड़कर)** कृपानिधान, मैं तो एक कलाकार हूँ। मैं सन्तुष्ट हूँ कि मेरी कला से आप भी दुविधा में पड़ गये। इस बात पर मुझे पुरस्कार मिलना चाहिये।

विष्णु— पुरस्कार, तुझे ऐसा पुरस्कार दूँगा कि सारा संसार याद करेगा। आने वाली सन्तति तेरे नाम पर थूकेगी। यमराज!

यमराज— हाँ भगवन्।

विष्णु— दूतों से कहो कि इसे ऊपर टांग कर नीचे भट्टी में आग इस भांति सुलगायें कि एक दिन में इसका एक इंच भाग जले।

(चित्रगुप्त अपनी बही पर लिखने लगता है।)

विष्णु— और अपराधी से पूछो कि उसकी अन्तिम इच्छा क्या है। वह पूरी की जायगी।

राजनीतिज्ञ— महामहिम, मुझे आधे घण्टे के लिये फिर मर्त्यलोक भेज दिया जाय।

विष्णु—
यमराज— } **(अचम्भे में)** क्यों?

राजनीतिज्ञ— **(क्रोध में)** क्यों! मैं चीख़ना चाहता हूँ, चिल्लाना चाहता

हूँ, शोर मचाना चाहता हूँ। मैं विष्णु की नेतागिरी भुला दूँगा। रेडियो पर, टेलीविज़न पर, सिनेमा से, रिकार्डों से मैं संसार को जता दूँगा कि सब धर्म-कर्म झूठ है, धोखा है, फरेब है। ढंढोरा पीट रखा है कि मेरा नाम लेने से आदमी तर जाता है। पापी अजामिल तर गया, गणिका तर गई, हाथी तर गया। यह पुराने ज़माने की नेतागिरी अब नहीं चलेगी। मैं चिल्ला चिल्ला कर सब को चेता दूँगा कि यह सब झूठ है। मैंने तो विष्णु के प्रत्यक्ष दर्शन किये हैं, फिर भी मुझे भट्टी मिली है। विष्णु की कोई महिमा नहीं ······

विष्णु— (**सिर हाथों में पकड़ कर**) यमराज, इसे स्वर्ग पहुँचा दो।

———

बीस और अस्सी का अनुपात

मैं नवयुवक हूँ। कालिज का छात्र हूँ। भारत का नागरिक हूँ। सफेदपोश हूँ। शरीफ हूँ।

और यह सब होने के कारण मुझ में कुछ आदतें हैं। इन आदतों ने मेरे चार चांद जड़ दिये हैं, ऐसा मैं सोचता हूँ।

ये आदतें मेरे अन्दर पहले नहीं थीं। पर मैंने अपना वातावरण देखा, अपना संसार देखा, अपना जीवन देखा। फिर मुझे इन्हें डालनी पड़ी। आदतें एक बार पड़ते ही जीवन का अंग बन जाती हैं। दूध में पानी की तरह घुल मिल जाती हैं।

मेरी एक आदत है— मैं जिसके घर जाता हूँ उसकी मेज़ टटोलने लगता हूँ। सब चीज़ें उलटी पुलटी जाती हैं और मैं अपने दोस्तों से बातें करता रहता हूँ। मेरी अंगुलियाँ इस दक्षता से मेज़ पर नाचती हैं कि उस पर पड़े कबाड़ में से दो तीन अच्छी चीज़ें निकाल ही लेती हैं। चीज़ें जो पुस्तकें हो सकती हैं, कापी हो सकती हैं, नये साल की डायरी हो सकती हैं, पैन पैन्सिल हो सकती हैं। जब मैं वापिस लौटता हूँ तब वे मित्रों से माँगी हुई मेरे हाथ में दबी होती हैं। इनके कारण मुझे अपने मित्रों को बहुत धन्यवाद देने पड़ते हैं।

लेकिन एक बात मेरी समझ में नहीं आती। किसी भी मित्र के घर पहुँचने पर वह मुझे बहुत परेशान नज़र आता है। मैंने यह भी देखा है कि कान उसके मेरी ओर होते हैं और आँखें अंगुलियों और मेज़ का सम्बन्ध स्थापित होता देखती रहती हैं। मुझे उस पर बड़ी खीज चढ़ती है। वह मुझे समझता क्या है? क्या वह मुझे उस नवयुवक की तरह

समझता है जो एक दिन मुझ से मिलने आया था और उस दिन मेज़ से मेरी घड़ी गायब हो गई थी? या उस नवयुवक की तरह जो मेरी मेज़ पर रखा पाँच का नोट अपना समझ कर ले चलता बना था?

मैं उसे धमका दूंगा। आखिर मुझे पढ़ने लिखने का शौक नहीं है। जो चीज़ें मैं मांग कर लाता हूँ वे बेकार पड़ी रहती हैं। मुझे बस यह एक आदत है।

यह अवश्य बुरी बात है कि मैं उन्हें वापिस पहुँचाना भूल जाता हूँ। मैं इस भूलने की आदत को कम करना चाहता हूँ और कोशिश में हूँ। पर आदत आदत होती है। जीवन से आदत, दूध से पानी, अलग नहीं किये जा सकते।

मैं अपने सब मित्रों से कह दूंगा। जो चीज़ मैं मांग कर ले जाऊं उसकी बार बार याद दिला दिया करें, हर बार मिलने पर मुझे टोकें। एक दो वार कहने से भला भूलने की आदत कैसे भुलाई जा सकती है।

मेरी दूसरी आदत पड़ौस से सम्बन्धित है। मुझे गाने का बहुत शौक है। इसका अर्थ यह नहीं कि मैंने कहीं गन्धर्व मन्दिर में अभ्यास किया है। मैं तो इसे ईश्वर-प्रदत्त देन समझता हूँ। यह विद्या बहुत दिनों से लुप्तप्राय थी, पर अब सिनेमा ने इसकी घर घर अलख जगा दी है।

संगीत ईश्वर की कृपा है। इसके लिये अभ्यास की आवश्यकता नहीं, मूड जाये भट्टी भाड़ में। जब मैं पड़ौस के छज्जे पर कुमारी मनचोर को बाल सुखाते देखता हूँ तो मेरे मुख से स्वयं निकल पड़ता है :—

रात को चुप चुप आया करो।
हमसे बातें मिलाया करो॥

और इसकी लय 'शम्भु सदा सहाय' फिल्म में गाये गीत की लय से दुगनी बढ़िया होती है।

या फिर बगल की भाभी छत पर कपड़े फैलाती हैं तो मैं ग़ज़ल सहगल की तर्ज़ पर गा उठता हूँ :—

हमने उनको देखा तो क्या बिजली देखी ।

अब इसमें मेरी क्या गलती है अगर कोई यह सुनकर मुस्करा देता है या तिनक जाता है या क्रोधित हो उठता है । और तीनों हालतों में सारा पड़ौस मेरे द्वार पर आ लगता है । फिर मैं उन्हें समझाता हूँ—

आदि कवि वाल्मीकि के मुख से पहला छन्द क्रौंचवध के समय निकला था । क्या वह समय उपयुक्त था ? वाल्मीकि जी को कविता करनी आती थी या नहीं ? उस छन्द को उन्होंने किस लय में पढ़ा ? भैया, यह गीत ग़ज़ल ऐसी चीज़ें हैं जिनके बारे में मस्तिष्क से कुछ नहीं सोचा जा सकता । इनके विषय में हृदय, नयन और मुख ने कुछ सांठ गांठ कर रखी है जिससे बेचारा मस्तिष्क हारा रहता है ।

फिर भी पड़ौस नहीं मानता । मैं हाथ जोड़कर कहता हूँ, अब समय देखकर गाया करूंगा ।

अब मैं रात को बल्कि आधी रात को छत पर लेटकर गाता हूँ । यह बात अवश्य है कि मेरा स्वर इस समय दूना ज़ोरदार होता है ।

गाना सुन पड़ौस फिर जुड़ता है । लीजिये साहब, न दिन में, न रात में । मुझे यह मानने के लिये मजबूर होना पड़ता है कि मेरा मुहल्ला बिल्कुल नामाकूल है ।

आदत नम्बर तीन सिनेमा देखने की है । मेरी हर सन्ध्या सिनेमा हाल में कटती है । इस हर सन्ध्या बिताने की आदत के कारण मुझे अंग्रेज़ी फिल्म अच्छे लगते हैं क्योंकि वे दूसरे, तीसरे दिन बदलते रहते हैं । मैं यह मानता हूं कि फिल्म को दुबारा देखने में कोई आनन्द नहीं आता ।

अंग्रेज़ी फिल्म अच्छी लगने का और कारण है— उनका अपने में

सम्पूर्ण सुन्दर होना। वे लड़कियों का पीछा करने की कला दिखाते हैं, प्रेम करने की कला, चुम्बन करने की कला, आलिंगन करने की कला। इस लिहाज़ से हिन्दी फिल्म झूठी लगती हैं। दोनों अर्थ में— झूठी माने नकली और झूठी माने बासी, किसी की चखी।

सिनेमा देखने की आदत औरों को भी होती है। पर मैं इसमें पूरे आनन्द लूटता हूँ। जिस हाल में सीटों पर नम्बरिंग होता है, वहाँ मैं बुकिंग क्लर्क को टिप देता हूं— 'किसी लड़की की बगल में।' सादे हाल में मुझे स्वयं सीट ढूँढनी पड़ती है, बगल में या पीछे।

फिर फिल्म आरम्भ होने पर अनजाने मेरा पैर किसी पैर से टकरा जाता है, मेरी बाँह किसी कोमल मांस से छू जाती है।

कुछ वर्षों पहले यह एक बार होने पर मुझे पैर या हाथ दूसरी बार के लिये ढूँढना पड़ता था। तब फिल्म देखने का मज़ा आधा रह जाता था। पर अब मुझे अधिकतर यह अनुभव होता है कि वह कोमल मांस वहीं रखा रहता है, बल्कि एक आध बार जब फिल्म के किसी रोमांचक स्थल पर मैं तन्मय हो जाता हूं तब वह स्वयं मुझसे छू जाता है।

मध्यान्तर और अन्त पर बहुधा मुझे उनके साथियों की जलती आँखें देखने को मिलती हैं। पर मैं घबराता नहीं। घबराऊँ क्यों जब मेरे दिल में कोई चोर नहीं। मैं आँखों से उन्हें समझाने का प्रयत्न करता हूं।

मैं जान बूझकर ऐसा नहीं करता। यह मेरी आदत पड़ गई है। इसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं। मैं नहीं जानता कि आप कहाँ रहते हैं; और इस रात्रि के उपरान्त आप से भेंट भी होगी या नहीं। यह तो मेरी आदत है, बड़ी निर्दोष आदत। आप भी यह आदत डालिये। फिर देखिये सिनेमा में आने का आनन्द दूना हो जाता है। एक तो फिल्म हृदय-तन्त्री छेड़ती है फिर ज़रा सा छू जाना भर समस्त नसों को अवर्णनीय सुख पहुँचाता है।

चहलकदमी करने की आदत बड़ी अच्छी है। यह मैंने स्वास्थ्य की पुस्तकें पढ़कर डाली या और किसी कारण वश, बता नहीं सकता। दिन के कुछ छंटे हुए समय हैं जब मैं छंटे हुए स्थानों पर चहलकदमी करता हूँ। मेरे साथ कोई मित्र होता है जिसके साथ मैं एक काल्पनिक नीना, नरगिस या नताली का वर्णन करता हूं। खूब ज़ोर से, पहले क्षण से लेकर आज तक का। युवक हमें देखकर आहें भरते हैं। वृद्ध हमें ईर्ष्या से घूरकर देखते हैं।

मेरी कहानी प्रतिदिन होती एक है, पर मेरा भूखा सैक्स उसमें नई नई ताज़गियाँ भरता रहता है और अपने कहने पर मैं स्वयं चटोरे ले लेकर आनन्द लेता हूँ।

वहीं कोई लड़की मिलती है। वह सड़क पर हमें छेड़ती चलती है। यदि मैं उनके छेड़ने का उत्तर देता हूं तो बदमाश समझा जाता हूँ। खैर, कोई कुछ समझे, पर मैं बिना उत्तर दिये हार नहीं मान सकता। उत्तर देना मेरी आदत बन गया है।

छेड़ने की कला में मैं कोमल सैक्स को गुरू मानता हूँ। वे इसमें प्रवीण होती हैं। जबकि हम कल्पों से इसका अभ्यास करने पर भी बिल्कुल नौसिखिया हैं।

उनकी कला के इतने अंग हैं— चाल में लचक आ जाना, साड़ी या दुपट्टे को वक्ष पर से खिसकाना, कटाक्ष से देखना, मुस्कराना, अन-जाने से पल्ला या दुपट्टा फहराना जो शायद हमें छू जाय, स्वागत की दृष्टि से चोरी छिपे देखना।

सोचने की बात यह है कि इनमें से हम कुछ नहीं कर सकते। चाल में लचक लायें तो लंगड़े लगें। साड़ी और दुपट्टा पहन नहीं सकते और फिर वक्ष कहाँ से लाये। कटाक्ष देना जानते नहीं। मुस्कराएँ तो ऐसा लगता है जैसे पेट में दर्द हो रहा हो।

सो उत्तर के लिये हमने कुछ असभ्य तरीके छांट रखे हैं। मैं भी उन का प्रयोग करता हूँ। भेड़िया सीटी बजाता हूँ। कटाक्ष के उत्तर पर आँख टीपता हूँ। ग़ज़ल गुनगुनाता हूँ। मित्र के माध्यम उन्हें कुछ सुनाता हूँ। या फिर उनकी नाराज़गी का ख़तरा उठाकर सीधे बातचीत करता हूँ, जानते हुए भी कि उत्तर मुझे नहीं मिलेगा।

चहलकदमी करते समय मुझे ख़रीदने की भी आदत है। मैं किसी दुकान में घुस जाता हूँ, चार आठ आने की चीज़ें खरीदता हूँ। कभी कभी दुकानदार मुझे टोक देता है। कहता है चवन्नी खोटी है। मैं उस पर बरस पड़ता हूँ। वह मुझे क्या समझता है? क्या मैं चार सौ बीस हूँ? मैंने उसे जानकर नहीं दी। न मैंने यह जान कर ली है। कोई मुझे भी भेड़ गया है। मैंने नकली चवन्नी बनाने की टकसाल नहीं खोल रखी। खैर, कल को मैं बदल जाऊँगा।

उस दिन से मैं उस दुकान पर नहीं जाता। दुकानदार को अवश्य दुख होता होगा कि एक चवन्नी के पीछे उसने ग्राहक खो दिया।

या मैं किसी हलवाई की दुकान पर पहुँचता हूँ। चार आने की चीज़ चखता हूँ और चार पैसे की चीज़ मोल लेता हूँ।

जब मैं किसी दुकान से निकलता हूँ तो सौ में से एक नीले चन्द्रमा यह होता है कि मेरी जेब फूली होती है। दुकानदार आँखों ही आँखों में कहता है कि मैंने उसकी आँख बचाकर कोई चीज़ तीर की है और मैं उसे आँखों ही आँखों में डाटता हूँ कि मेरी जेब पिछली दुकान की बिक्री से फूली है। यदि वह झूठी तोहमत लगायगा तो नतीजे का भगवान मालिक है। मैं उसकी सुरक्षा का ज़िम्मेदार नहीं हूँ।

वह आँख फेर लेता है। जानता है कि बिना बनाये मेरी एक यूनियन है जो हर नगर और गाँव में फैली है। इस शहर में तो जो होगा सो होगा, अन्य में भी तहलका मच जायगा। और फिर एक एक व्यक्ति

उसे गिन गिन कर सौ गालियाँ देगा।

वह कायर है। नहीं, समझदार है। सोचता है अगली बार अधिक सावधान रहेगा। और किसी नीले चन्द्रमा के दिन मैं रंगे हाथों पकड़ा गया तो बहुत क्षमा मांगते हुए और लाचारी दिखाते हुए चीज़ वापिस ले लेगा।

मेरे साथ अन्तिम लाचारी है कि मैं दस दिन की छुट्टियों को बीस दिन की बना लेता हूँ। छुट्टियों में मैं सगे सम्बन्धियों या जान पहचान वालों के घर घूमने चल देता हूँ। आजकल भले का ज़माना नहीं। मैं ताई, चाची, मौसी या भाभी से इधर उधर की गप्पें करता हूँ। गृहस्वामी के काम पर जाने के उपरान्त उनका जी बहलाता हूँ। बच्चों को खेल खिलाता हूँ। समवयस्कों को लच्छेदार बातें सुनाता हूं। साथ घुमाने ले जाता हूं। फिर भी सगे सम्बन्धियों और जान पहचान वालों का मुंह चढ़ा रहता है।

उन्हें मुझसे कई शिकायतें हैं।

मैं उनके युवक लड़के, लड़कियों को बिगाड़ता हूं। वे मुझे पागल समझते हैं, और मैं उन्हें। क्या मैं इतना नहीं समझता कि मैं एक शरीफ घर में रह रहा हूं और मुझे कैसे सभ्य बनकर रहना चाहिये? तभी मैं अपनी सब आदतों को बालाए-ताक़ रख देता हूं। वे मुझसे जलते हैं कि मैं इतना सुन्दर बोलना क्यों जानता हूं तथा मुझे सब बातों का विस्तृत ज्ञान क्यों हैं तथा मैं यह हुनर उनके लड़के और विशेषतया उनकी लड़कियों को क्यों सिखाता हूं।

घुमाने में भी मेरा एक उद्देश्य है। मैं मां बाप की क्रूर-सत्ता को समाप्त कर देना चाहता हूँ। होता यह है कि मेरे समवयस्कों ने दिन की रोशनी दिल्ली में देखने पर भी आज तक लाल किला या कुतुब मीनार या

हुमायूँ का मकबरा या ओखला नहीं देखा होता। इस अत्याचार का प्रतिकार मैं घुमाने ले जाकर करता हूं।

दूसरी मुख्य शिकायत है कि मैं दुकानदारों से उनका नाम लेकर चीज़ें उधार ले आता हूं। खैर, काम की चीज़ें लाऊं तब भी कुछ बात है। वे कहते हैं कि मैं सिगरेट पर पैसे बिगाड़ता हूं।

जब वे उदाहरण सिगरेट का देते हैं तो मैं भी सिगरेट का ही उदाहरण लूंगा। वे सिगरेट पर पैसे बिगाड़ना कहते हैं। मैं कहता हूं कि सिगरेट मुंह में लगते ही जेब में एक मोटा पर्स रख देती है, आदमी को बेमुल्की नवाब बना देती है, उसे अपने को वाजिदअलीशाह समझने को मजबूर करती है।

आखिर वे बहुत तंग आ जाते हैं। मुझसे पूछते हैं कि मेरी छुट्टी कब ख़त्म हो रही है। मैं कहता हूं, कल। ऐसे कई कल बीतने पर एक दिन वे काम पर देर से लौटते हैं। मुझे बुलाकर कहते हैं— आज स्टेशन चला गया था काम से, सो तुम्हारे लिये कल की सीट बुक करा आया हूँ।

कभी कभी मुझे रात में देर से नींद आती है। तब मुझे सम्पर्क में आने वालों की दिल की डायरियाँ नोचने लगती हैं। सहपाठी के दिल पर लिखा होता है— मैं पचास प्रतिशत चोर हूं। युवतियों के दिल पर अंकित होता है— मैं सौ प्रतिशत जानवर हूं। मैं आँख से आँख लगाना जानता हूं, दिल से दिल लगाना नहीं जानता। उनके संरक्षकों के दिल बोलते हैं— मैं बीस प्रतिशत आदमी हूं, बाकी हिजड़ा, डान जुआन, कैसानोवा। दुकानदार के दिल गुर्राते हैं— मैं पूरा चार सौ बीस हूँ। इसी तरह और।

मैं बिलबिला उठता हूं। सब का मध्यमान निकलता है, मैं बीस

प्रतिशत आदमी और अस्सी प्रतिशत और कुछ हूं। बीस और अस्सी का अनुपात।

पर आदतें आदतें होती हैं। वे आदतें न हों तो उन्हें आदतें कौन कहे। सवेरे उठकर मैं रात की ख़ामख्याली पर खूब हँसता हूं और सोचता हूं— मैं तो सौ प्रतिशत सफेदपोश शरीफ हूं।

———

भोजन पर सिरदर्द

"हेमन्त! क्या कर रहा है? खाने चल। देख, मेरी तेरी थाली आ गई है। खाना ठण्डा हो जायगा। ······ क्या कहा? तेरी अच्छा कभी निमटेगी भी। ······ साइकिल रख दे। खाना खा कर चलाना। ······ फिर अभी। तू भले से तो सुनता ही नहीं। आकर बताता हूँ।

"अब कैसी जल्दी आ गया। ······ साइकिल खाने के कमरे में क्यों ला रहा है। इसे बाहर रख कर आ। ······ ठीक। ······ लो वैसे ही टुकड़ा तोड़ लिया। तुझे कितना समझाओ समझ में नहीं आता। अच्छे बच्चों को हाथ धोकर खाना आरम्भ करना चाहिये।

"मेरा बेटा राजा बनकर आया। ······ अब कंचों से मत खेलो। इन्हें जेब में रखा रहने दो। ······ यह नीला कंचा अनिल से जीता है। बड़ा सुन्दर कंचा है।

"मैं तो एक रोटी खा चुका और तू बात करने में मस्त है। ले, यह कपड़ा अपने गले के लगा ले। ······ नहीं साढ़े पांच साल का बच्चा बड़ा नहीं होता है, तेरे स्कूल की पोशाक खराब हो जायगी। ······ कुत्ते को कपड़ा नहीं चाहिये। जैक के कपड़ा बांधने की आवश्यकता नहीं। ······ क्योंकि वह खाना नहीं बिखेरता। ······ ज़मीन पर बिखेरता है अपने ऊपर नहीं।

"अच्छा अब खाना शुरू करो। ······ दाल गरम है। कौन कहता है? मैं तो इतनी देर से खा रहा हूँ। बिल्कुल ठीक है। ······ इसमें क्या क्या पड़ता है। बहुत सारी चीज़ें। दाल, नमक, हल्दी ······ यह क्या! मैं तुमसे कितनी बार कह चुका हूँ कि रसे के साग में उंगली नहीं

डाला करते। बहुत गन्दा काम है। ...... यह कुछ नहीं, जीरा है। ...... जीरा दाल के बनने के बाद उसमें छोंका जाता है।

"पागल, आदमी की उंगलियां नहीं छोंकी जातीं। ...... शाबाश, सारी दाल अपने ऊपर गिरा ली। कोई बात नहीं, मैं पोंछे देता हूँ। ...... कपड़े पर निशान ज़रूर पड़ेगा। ...... अगर दीवार पर दाल गिरा दी तो उस पर भी निशान पड़ जायगा। ...... जैक पर भी धब्बा पड़ेगा।

"यह कच्ची गाजर और मूली की प्लेट है। इसे क्यों नहीं खाता। कुछ लेकर अपनी थाली में रख ले। ...... यह बहुत लाभ पहुँचाती हैं। ......हेमन्त, तूने ठीक कहा, मैं अपनी थाली में तो रखना भूल ही गया। ...... क्यों नहीं, मैं इन्हें ज़रूर खाऊंगा। मुझे यह बहुत स्वाद लगती हैं। कच्चे साग खाना जीवन बढ़ाते हैं। दुनिया में कोई चीज़ ऐसी नहीं जो मुझे गाजर से अधिक अच्छी लगती हो। ...... दो तीन चीज़ों का नाम लूँ। जैसे, सिन्धी आलू। मेरा यह मतलब नहीं कि मैं सिन्धी आलू बिल्कुल खाता ही नहीं। पर ......

"आज सिन्धी आलू नहीं बने हैं। ...... क्यों नहीं बने, यह अपनी अम्मा से पूछ। अब तो खाना खा ले। शाम को बनवा देंगे। विमला, शाम को सिन्धी आलू अवश्य बनेंगे, नहीं तो मैं खाना नहीं खाऊंगा और न हेमन्त।

"देख हेमन्त, हम खाते खाते टुकड़े को अपने मुँह से निकाल कर नहीं देखते। क्योंकि सामने बैठे आदमी को यह अच्छा नहीं लगता। वह तुम्हें जंगली समझेगा। ...... तुमने अशोक चाचा को ऐसा करते देखा था। आदमी कभी कभी ग़लती कर जाता है। ...... टुकड़े को झटपट मुँह में रख लो और चबाना शुरू कर दो। खाना खूब चबाकर खाना चाहिये। ...... शाबाश, बड़ा अच्छा बबलू है।

"ज़रूर, जैक को भी गाजर अच्छी लगती है। ······ बिल्ली को भी। किसी दिन हम मौहल्ले भर की बिल्लियों को बुला कर गाजर खिलायेंगे। कोई आ जाय तो उसे मैं अपनी गाजर दे दूँगा।

"यह क्या किया! रोटी ज़मीन पर गिरा दी। ख़ैर, उसे पड़ी रहने दो, जैक खा लेगा।

"क्या कहा? मैं तो अपनी गाजरें खा रहा हूँ। अच्छा, अब दही पी जाओ। लो, मैं आँखें बन्द कर लेता हूँ। जब तुम सब कुछ पी जाओगे तो मुझे बड़ा अचम्भा होगा। सब ख़त्म कर दिया। क्या कहने!

"अपना कपड़ा उतार कर ज़रा मूँछें पोंछ लो। हाथ भी पोंछ लो। ······ मेज़ तो विमला साफ़ कर देगी। हाँ, जूते पर बुरुश मार लेना।

"मैंने क्यों छिपाया है? क्या छिपाया है? किस प्लेट के पीछे? अरे, ये तो गाजर निकलीं। गाजर हैं न? जब मैं आँख मीचे बैठा था तब मेरे हाथ से प्लेट के पीछे गिर गई होंगी। तुमने मुझे देखा? मैंने जान कर छिपाई हैं। नहीं, यह तेरी कल्पना है। हां हां, क्यों नहीं खाऊंगा। लो, मैं खाना शुरू करता हूँ।

"देखा, मैं कैसे आराम से गाजर खा रहा हूँ। मैं मुँह बनाकर नहीं खाता। मैं मुस्करा रहा हूं, हँस रहा हूँ। गाजर कच्ची ······ खाने पर ······ बड़ा ······ लाभ ······।

"ओ–ो ······ ओ–ो–ो!"

———

बैल का दूध

मुझे बहुत तेज़ गुस्सा आया। लोग जानते हैं कि मेरी जीवन-नीति है—

ऐ शमा तेरी उम्र तबई है एक रात।
हँस कर गुज़ार या इसे रोकर गुज़ार दे ॥

क्या तभी वे मुझे दबाना चाहते हैं? मेरी मस्ती का अनुचित लाभ उठाना चाहते हैं।

कल रात के पहले पहर में नींद उचट जाने के कारण सारी रात नींद नहीं आई। रात नींद की बेचैनी से कटी और अब मैं क्रोध से बेचैन था।

"मेरे प्यारे पड़ौसी," मैंने लिखना शुरु किया। मुझे अपने ऊपर गर्व हुआ। आरम्भ अच्छा हुआ है। कितना तीखा व्यंग है। "एक नागरिक का सर्वप्रथम कर्त्तव्य अपने परिवार के प्रति होता है। उस ओर आपका किया गया कार्य मैं अच्छी तरह जानता हूं। मेरे गाँधी बाग से मोल लिये पौधे लगाने के अगले दिन अन्तर्धान हो जाते हैं, बगल के डाक्टर शर्मा और वकील वर्मा के बोर्ड हवा में उड़ जाते हैं। साथ ही पास-पड़ौसियों को दिखाई गई आपकी सद्भावनायें भी हमें अच्छी प्रकार याद हैं। किन्तु कल आप ने हद कर दी। रात के साढ़े नौ बजे से जो कवि सम्मेलन आपने मौहल्ले वालों को रेडियो पूरा खोल कर सुनाया उसके लिये आपको किस भांति धन्यवाद दें। शोक मुझे यह है कि बच्चन, दिनकर, नीरज आदि कवियों का उपासक होने पर भी कल किसी कारण मैं पूरे समय यह सोचता रहा कि किस तरह इनके गले दाब दूं, जिससे रात ······ खैर, अब कभी आपको रेडियों में बुलाकर कवि

सम्मेलन मौहल्ले वालों को सुनाना हो तो मुझे उचित अवसर दे कर सूचित करने की कृपा करें ······।"

हलके आसमानी रंग के लिफाफे में पत्र को बन्द करने तथा उस पर टिकट लगाने के बाद मुझे कुछ शान्ति मिली। मैं अपनी आँखों से पड़ौसी पर घड़ों पानी पड़ते न देख सकूं और उससे ऐसा पत्र लिखे की माफी मांग लूं, इसलिये मैंने यह पत्र डाक से भेजना ही उपयुक्त समझा।

पत्र लैटरबक्स में डालने के लिये मैं घर से बाहर निकला। सामने से पड़ौसी और उनके सुपुत्र आते हुए मिल गये। पुत्र के हाथ में मेरा नया लगाया हुआ गिलबिलिया का पौधा था। "चाचाजी, मैंने तो सोचा था कि इसकी जड़ें गांठदार होंगी।"

"नहीं बेटा, गांठदार जड़ की इस तरह की बेल होती है।"

यह सुनकर उसने पौधा ज़मीन पर फेंक दिया।

अब पड़ौसी की बोलने की बारी थी। "देखिये, अरुणजी, हमें आज रात को आपका रेडियो चाहिये। हमारा रेडियो पता नहीं क्या बात है खराब हो गया है। और आज मंगल की छुट्टी है।"

बहुत सहानुभूति दिखाते हुए मैंने पूछा— "आपके रेडियो में क्या खराबी हो गई ?"

"पता नहीं, क्या बात हुई।"

"आज बेगम के पुल का बाज़ार खुला रहता है।" मैंने सलाह दी।

"देखिये, यह तो ठीक है। पर रेडियो ऐसी चीज़ है जो जान पहिचान वालों को देनी चाहिये।"

"वहाँ मेरे सहपाठी की दुकान है।"

वे खीसें निकालकर हँसे, "ओह, आप समझे नहीं। जानने वालों के

यहाँ चीज़ें बदलने का तो डर रहता ही नहीं, साथ ही साथ पैसा धेला भी नहीं देना पड़ता। माना आप भी पैसे नहीं देते होंगे, लेकिन यह कहाँ तक ठीक है कि मेरे कारण आप अपने सहपाठी का अहसान सिर पर लें।"

मैं हक्का बक्का खड़ा रहा।

"चाचाजी, आज एक विशेष कार्यक्रम है।" पुत्र ने उत्साहित स्वर में कहा।

पड़ौसी ने साथ दिया, "बच्चों का उत्साह देख हमें दुःख हो रहा था कि क्या करें। तभी मुझे आपका ध्यान आया। आप भले आदमी हैं। फिर नौ बजे ही सो जाने वाले।"

"हां, हां, आप चिन्ता न करें। रेडियो आपका ही है।"

"बस, तो मैं उसे साढ़े आठ बजे मंगा लूँगा। इतने आप हिन्दी के समाचार आदि सुन लेना।"

"ज़रूर, ज़रूर!"

"आज बड़ा अच्छा संगीत का प्रोग्राम आ रहा है।" उन्होंने बात आगे बढ़ाई। "रात के दस बजे आरम्भ होगा।...... बाई दी वे, कल का कवि सम्मेलन तो आपने सुना होगा।..........."

उनसे बातें घोटकर और वादा करके मैं अपने कमरे में लौट आया। यह सच है कि क्रोध के एक मिनट में हम सुख-शान्ति के ६० सेकिण्ड खोते हैं। परन्तु!

मैं हल्के आसमानी लिफाफे से टिकट छुटा रहा था कि उससे फिर काम ले लूँगा, पर मेरा हाथ बुरी तरह कांप रहा था।

उस दिन दफ्तर में कैसे काम किया यह वे ही जानते हैं जिनका उस दिन मेरे साथ वास्ता पड़ा।

घर लौटा तो पत्नी ने पग रखते ही कहा, "आज तुम्हें कुछ देर हो गई है। ज़रा जल्दी करो, नौचन्दी देखने चलना है।"

मेरे तन बदन में आग लग गई! मैं जानता था अनमना होने के कारण आज मैं अपने साथियों के साथ भी नहीं बोला था और सीधा घर चला आया था।

किन्तु मेरे मुंह खोलने से पहले ही बगली वार आया। "और तुम्हारा बढ़ई आज भी नहीं आया। एडवान्स लेने के लिये तो घर के दस चक्कर काटे, लेकिन अब काम करने के समय शक्ल ही नहीं दिखाता। तुम्हारे जैसे सीधे आदमी के भी क्या कहने, सब से लुट जाते हो।"

मैंने त्यौरी चढ़ा कर पूछा, "क्यों, इसमें लुटने की क्या बात है?"

पत्नी ने मेरे प्रश्न पर कोई ध्यान न देकर कहना जारी रखा। "लिखने को तो सौ बातें लिख लेंगे, पर किसी के सामने बोल नहीं निकलता।"

कितना भी क्रोधित होने पर मेरे में एक अच्छी बात थी— मैं पत्नी से नहीं लड़ता था। पर अब तो बढ़ई का बहाना मिल गया था। मन कह रहा था— बेटा अरुण, अब इतना क्रोध दिखाओ कि पत्नी भी आगे से संभल कर बातें करे।

मेरे नेत्रों के लाल डोरे तन गये। मुंह से फेन निकालता हुआ मैं बोला, "अच्छा, आज मैं पहले बढ़ई से सुलट लूं। आज उसे बता दूं कि लोग मुझे जितना सीधा समझते हैं उतना मैं हूँ नहीं।"

फीते खोलने रोक मैं उन्हें फिर से बांधने लगा। मुंह मुंह में बड़-बड़ाता जा रहा था।

किन्तु पत्नी की ओर देखने पर पता चला कि उसका मुंह उतर गया है। वह अपने अनुपयुक्त समय छाँटने पर प्रायश्चित्त कर रही है।

मेरी बुद्धि में किरण फूटी। फीते फिर खोले जाने लगे। "लेकिन मैं

अगर बढ़ई के गया तो हमें नोचन्दी जाने को बहुत देर हो जायगी।"

और उस समय जैसे पत्नी के नयन कहीं पहले देखने को मिल जाते तो मैं आई. ए. एस. में सर्वप्रथम आता।

मैंने अपने गंजे होते सिर पर हाथ फेरा। "ख़ैर, उसे एक चिट्ठी तो लिख ही दूं, नौकर दे आयगा।"

पत्नी पैड उठा लाई।

मैंने कहा, "तुम बैठकर लिखो। मैं कपड़े बदलते बदलते बोलता हूँ।"

नारी मक्खन होती है, मानता हूँ। साथ में ठण्डी भी होती है। और ठण्डा मक्खन पत्थर का काम करता है। किन्तु मेरी आज की दिखाई भावनाओं ने मक्खन को बिल्कुल पिंघला दिया था।

"दुकानदार वही सफल होता है जो समय पर काम पूरा करके दे। और जिसने पैसे ले रखे हों उसे तो विशेष रूप से······" मैं पत्र लिखा रहा था। आरम्भ में क्या लिखना चाहिये, यह समझ में न आने के कारण मैंने खाली छोड़ दिया था।

तभी नौकर ने बढ़ई के आने की सूचना दी। बढ़ई आया। खाली हाथ था। "बाबू जी, मेरे बच्चे बीमार हैं। बहू के बच्चा होने वाला है। सब कुछ मुझे करना पड़ता है। काम को समय नहीं मिला। जल्दी से जल्दी पूरा कर दूंगा।"

मैं झल्ला रहा था। "हूँ, काम के वक़्त बच्चे बीमार हो गये। तुम लोगों का कुछ भरोसा नहीं है। समय की कीमत तुम नहीं जानते।"

मन ही मन कह रहा था— खाने को पैसा नहीं है और बच्चे पैदा करते रहते हैं। भगवान भेजने में संकोच नहीं करता तो हम भी वापिस करने में क्यों संकोच करें। किन्तु फिर ध्यान आया— इन बेचारों का एक ही तो मनोरंजन का साधन होता है, वे भी क्या करें।

बढ़ई गिड़गिड़ाने लगा, "बाबूजी, मैं सच कहता हूँ। घर के काम से निमट लूँ फिर लग कर एक दो दिन में आपका सारा काम कर दूँगा।... बाबूजी, मुझे पैसों की बहुत सख्त ज़रूरत है। पांच रुपये और दिला दें तो बड़ी मेहरबानी होगी।"

मैं, लेखक का दिल, पिघल गया। "कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। लो पांच रुपये और ले जाओ। पर देखना हमारा काम जल्दी निमटा देना।"

उस समय मैं पत्नी के मुख की ओर देखने की हिम्मत नहीं कर सकता था।

अन्य दिन मैं आठ बजे नौचन्दी चलता था, उस दिन पड़ौसी की आगवानी के डर से बीस मिनट पहले भाग लिया।

शनिवार का दिन था। बहुत भीड़ थी। मैंने सोचा— चलो बाहर बाहर से कार ले चलें।

कार को कहचरी की ओर मोड़ दिया। वहाँ से विक्टोरिया पार्क, सूरज कुण्ड होते हुए नुमाइश गेट जाने का विचार था।

कचहरी के बीचोंबीच ख़ज़ाना था। रात अंधेरी थी। मेरी कार उससे सौ कदम की दूरी पर थी कि एक कड़कती आवाज़ आई— हाल्ट्, कम्स देयर (रुक जाओ)। हैडलाइट में देखा, पहरे के सिपाही ने राइफिल कन्धे पर रख ली है और सेफ्टी कैच ऊपर कर निशाना लगा रहा है। ४० की स्पीड ब्रेक मारने पर भी उसके सामने ही रुकी।

मैंने पूछा— "क्या बात है?"

अंगूठा घोड़े पर रखे रखे वह बोला, "बाबूजी, आप चले आ रहे हैं। आपको कहना चाहिये था पब्लिकमैन (जनता), फ्रैण्ड (मित्र) या फो (शत्रु)।"

अरे मूर्ख, अगर फो आया भी तो क्या वह फो कहेगा।

गुस्से के मारे मैं सितार की भाँति झनझना उठा। लेकिन पत्नी मुँह शीशे से निकाल कर बोली, "माफ करना जी, हमें मालूम नहीं था।" फिर मुझे गोदा, "चलो न जी।"

गाड़ी आगे बढ़ गई।

मेरा क्रोध पत्नी पर केन्द्रित हो गया। इसकी आदत ही यह है। हमेशा मेरी इन्सल्ट कर देती है। आदत बदलने में नहीं आती। स्त्रियों की आदतें बदलने से तो आजकल उन्हें बदल डालना ही आसान हो गया है। माफी मांग ली। किस बात की? मैंने क्या किया था? मान लो गिरफ्तार कर लेता। तो चिन्ता क्या थी! मैं सवेरे मजिस्ट्रेट के सामने पेश होता। और कहता— मैं अपने को दोषी स्वीकार करता हूँ। मजिस्ट्रेट और पेशकार के मुँह से एक साथ निकलता— क्या? मैं मुस्कराता— हाँ, मैं एक सीधे सच्चे नागरिक होने का दोषी हूँ। पर एक बात कृपया बतायें। यदि आप पत्नी के साथ नौचन्दी जा रहे हों और कोई आपको ··· खैर, आप मुझ पर इतना जुर्माना कर दें कि कचहरी के दोनों ओर द्वारों में फाटक लग जायँ और फिर किसी सीधे सच्चे नागरिक की मान-हानि होने का सवाल न उठे। तब मजिस्ट्रेट शर्म में गड़ जाता तथा मोटा सिपाहियों का अफसर अपनी मूँछें चबाने लगता।

"अरे, रोको! रोको!" फिर पत्नी!

ब्रेकों की किच किच में कार रुक गई। गांधी आश्रम से आगे वाले मोड़ पर था। पुलिसमैन ने मुझे रोकने का हाथ दे रखा था। पर मैं चला जा रहा था। पत्नी न चीखती तो शायद ······

सामने का ट्रैफिक चलता रहा। यहीं से नौचन्दी आरम्भ होती है। बड़ी भीड़ थी।

ट्रैफिक वाले पुलिसमैन का साथी जेब से नोटबुक निकालता मेरे पास आया। "आपका नाम?"

"भई, माफ करना। मैं ज़रा बहक गया था।"

उसने नोटबुक जेब में रखते हुए कहा, "बाबूजी, ज़रा कार सावधानी से चलाया करें। आजकल भीड़ बहुत अधिक है। और कार वालों को पूरी छूट नहीं मिल सकती।"

मैं क्रोध में जल भुन गया।

———

एक डाक्टर सौ मरीज़

(मसूरी की एक शानदार कोठी का ड्राइंग-कम-डाइनिंग रूम। खाने की मेज़ पर चाय लगाई जा रही है। लता की नौकरानी रानी मेज़ पर सैण्डविच की प्लेट रख रही है।)

(शाम का समय है। पश्चिम से खुली खिड़कियां से हल्की गरम धूप आ रही है। रेडियो खुला हुआ है जिसमें से पश्चिमी संगीत सुनाई दे रहा है। रानी गुनगुनाती हुई मेज़ के इधर उधर घूम रही है और अपने में ध्यानमग्न है। द्वार पर खटखट होती है लेकिन रानी को सुनाई नहीं देता। साथ लगे सोने के कमरे से लता का स्वर आता है—)

लता— रानी!

रानी— **(सहमकर रुक जाती है)** जी, बहूजी।

लता— क्या तू बहरी है रानी?

रानी— नहीं बहू जी।

लता— कोई दरवाज़े पर है।

रानी— हां बहूजी।

(रानी द्वार खोलती है। एक पुरुष अन्दर आता है।)

पुरुष— क्या लता रानी अन्दर हैं ?

रानी— रानी तो मैं हूँ जी, बहू जी अभी आ रही हैं।

(पुरुष दिल खोल कर हँस पड़ता है। उसकी आयु तीस के लग-

भग है। आधुनिकतम फैशन का सूट पहन रखा है। वह रानी को ठेलता सा कमरे के अन्दर घुस आता है और खाने की मेज़ पर पहुँच कर सैण्डविच उठा कर खाने लगता है। रानी उसका मुँह ताकती रहती है।)

लता— क्यों अविनाश, तुम हो?

रानी— ये अविनाश बाबू नहीं हैं बहू जी। ये तो ...... **(प्रश्नसूचक दृष्टि से पुरुष को देखती है।)**

पुरुष— **(मुँह में दूसरी सैण्डविच रखते हुए)** महाराज काठपुर।

लता— यह महाराज काठपुर क्या बला है?

पुरुष— **(सोने के कमरे के द्वार की ओर बढ़ता है)** अन्दर कौन है? क्या बिन्नी है?

लता— तुम कौन हो?

पुरुष— इस समय तो फिलहाल महाराज काठपुर हूँ। पर भाई महाराज के निस्सन्तान मरने से पहले मुझे कुंवर चन्द्रिकाप्रसाद कहा जाता था। पता नहीं, तुम्हें मेरी याद है या नहीं। एक समय हम दोनों का विवाह होने वाला था।

लता— **(खुशी से चीख कर)** चन्नू।

कुंवर— जी हां, आपका सेवक।

लता— मैं बलिहारी जाऊं। अभी तो बारिश नहीं है चन्नू। तुम कहाँ से कूद पड़े!

कुंवर— कहाँ से! भई, कहीं न कहीं तो बारिश होती रहती है। सो बन्दा भी जगह जगह की सैर कर रहा है। और यहाँ पर तुम्हारा पता कैसे चलाया, यह मेरा व्यावसायिक भेद है।

लता— बहुत अच्छा। मैं अभी आती हूं।

कुंवर— तुम्हें यहाँ आये कितने दिन हुए हैं?

लता— कोई दो महीने।

कुंवर— तुम्हारी नौकरानी तो बहुत ज़ोरदार है।

लता— हाँ, कितनी बार कह चुकी हूं कि मुझे बीबीजी कहा कर, बहूजी तो विवाहित को कहते हैं। पर यह बहूजी की रट लगाये रखती है।

कुंवर— **(मुड़कर खाने की मेज पर पहुँचकर तीसरा सैण्डविच मुंह में डालते हुए)** वैल बिन्नी, जल्दी आओ। इस टेलीफोन की सी बातचीत में मज़ा नहीं आ रहा।

लता— मुझे देर नहीं लगेगी। मैं ज़रा शेव कर रही हूं।

कुंवर— **(मुंह फाड़कर)** क्या!

लता— चन्नू महाराज, अपनी भौं की।

कुंवर— वैल, ओह।

लता— सैण्डविच खाओ।

कुंवर— खा रहा हूं।

(कुछ देर शान्ति छाई रहती है।)

कुंवर— हलो लता।

लता— हलो।

कुंवर— सैण्डविच बड़े स्वाद हैं।

लता— धन्यवाद।

कुंवर— मैंने पिछले दिनों ही अखबार में एक मज़ेदार खबर पढ़ी थी। सरकार सैण्डविच पर भी टैक्स लगाने जा रही है। **(हँसता है)**

सरकार और सैण्डविच। सरकार ने सैण्डविच को छुआ तो स्वयं सैण्डविच हो जायगी। सैण्डविच भी क्या चीज़ है! ग़रीब खाये तो बादाम के लड्डू और पिश्ते के हलवे का मज़ा ले और अमीर खाये ······ ओह!

(द्वार खुलता है और नृत्य के गाउन में लता बाहर आता है।)

कुंवर— हे भगवन्, ······ मेरा मतलब है ······ वैल!

लता— **(मुस्करा कर)** क्या वैल?

कुंवर— वैल वैल वैल! **(सम्मोहन से में लता का हाथ पकड़ लेता है)** मेरे आसमानी बाप! तुम कैसी लगती हो!

लता— अच्छा।

कुंवर— अच्छा, ··· अच्छी! वैल, वैल!

(लता शीशे में जाकर अपनी सुन्दरता निरखने लगती है और वहीं से कहती है।)

लता-- बैठो।

(कुंवर बैठ जाता है, पर फिर खड़ा हो जाता है।)

कुंवर— मैं नहीं बैठ पा रहा। कहां की तय्यारी हैं?

लता— आज सॅवाय में नृत्य है। अविनाश मुझे लेने आने वाला है।

कुंवर— अविनाश?

लता— हां, मेरा मंगेतर समझो। वही मेरठ का रहने वाला।

कुंवर— मेरठ का रहने वाला— अच्छा मेरा लंगोटिया यार। मुझे उससे मिलकर बड़ी खुशी होगी।

(लता पोशाक हाथ में उठाकर आगे आगे चलती है। महाराज

काठपुर पीछे चलते हैं। रेडियो में वाल्ज़ की धुन बजनी शुरू होती है।)

कुंवर— हूँ।

लता— क्या हूँ ?

कुंवर— इतने दिनों बाद मिलना।

लता— हां।

(फिर शान्ति छा जाती है।)

कुंवर— धुन तो बड़ी शानदार बज रही है।

(लता के पैर थिरकने लगते हैं।)

कुंवर— क्यों न मेरे साथ भी एक ······

लता— कुंवर, तुम बड़े डार्लिंग हो।

(वे नृत्य करने लगते हैं।)

कुंवर— लता, (**उनके नेत्रों में प्रेम की तरलता घिर आती है**) मुझे ध्यान नहीं हमारा विवाह कैसे टूटा था ?

लता— क्यों ?

कुंवर— मैं जितना मूर्ख था ? (**आह भर कर**) विन्नी, तुम्हें चूम लूँ।

(दोनों चुम्बन करते हैं। तभी द्वार खुलता है और अविनाश अन्दर आता है।)

अविनाश— गुड आफ्टरनून।

(दोनों बिदक कर अलग हो जाते हैं। महाराज काठपुर अपनी टाई ठीक करने लगते हैं। लता अपनी जीभ काटती है।)

लता— मैंने तुम्हारे आने की आवाज़ नहीं सुनी!

अविनाश— यह तो साफ है।

(वातावरण में भारीपन छा जाता है।)

लता— मैं ज़रा मेक-अप ठीक कर आऊँ।

अविनाश— हाँ, तुम्हारा हुलिया बिगड़ रहा है।

(लता झपट कर अन्दर चली जाती है।)

कुंवर— कहो भई अविनाश!

अविनाश— **(अचम्भे से)** हैं!

कुंवर— तुम भी नहीं पहचान सके। अपने लंगोटिया चन्द्रिका को भूल गये।

अविनाश— कौन? चन्नू!

कुंवर— हाँ चन्नू।

(दोनों गले मिलते हैं।)

अविनाश— बड़ी अजीब भेंट हुई।

कुंवर— वैल, बड़ी अजीब भेंट हुई।

अविनाश— मुझे बिल्कुल आशा न थी।

कुंवर— मुझे भी। मैं तो तुम्हारे पते पर चिट्ठी डालने वाला था।

अविनाश— चलो, यहीं मिल गये। कल सॅवाय होटल में मिलो।

कुंवर— और कौन कौन हैं?

अविनाश— मैं और मेरे चाचाजी सर राधेश्याम।

कुंवर— यह सज्जन कौन?

अविनाश— मेरे संरक्षक। जो यह सोचते हैं कि मैं लड़कियों को अपने दिल से कैच की प्रैक्टिस कराता हूँ, तभी वे हमेशा मेरे साथ रहते हैं।

यदि मैं किसी सुन्दर लड़की को देख लेता हूँ तो गश उन्हें आ जाता है। गर वे मुझे लता के घर देख लें······

कुंवर— (**बात काट कर**) अविनाश, मैं······एक बात·······

अविनाश— क्या?

कुंवर— तुम्हारे आने पर जो सीन······

अविनाश— हाँ हाँ, माफी मत मांग।

कुंवर — यह सब रेडियो का कसूर है। संगीत और सैण्डविच में मैं बह गया।

अविनाश— चन्नू, बात यह है कि······

कुंवर— अविनाश, तुम्हें पता नहीं। एक समय था जब मैं लता से विवाह करने जा रहा था।

अविनाश— मेरी भी तो सुन।

कुंवर— वैल!

अविनाश— आज तो मेरा अहोभाग्य! इस सीन के ऊपर मैं आसानी से लता से अपना सम्बन्ध तोड़ सकूँगा।

कुंवर— (**मुंह फाड़कर**) क्या मतलब?

अविनाश— एक ऐसे जाल से जो कई दिनों से मेरी नसों को जकड़े हुए था। लता एक सुन्दर लड़की है, पर कुछ······कुछ······क्या कहते हैं उसे।

कुंवर— मनचली।

अविनाश— हाँ, बिल्कुल ठीक कहा तुमने। तुमने भी उसे मनचली पाया होगा। तुम्हारे साथ भी उसने चाल खेली होगी।

कुंवर— वैल, बहुधा।

अविनाश— बिना किसी कारण के।

कुंवर— बिना किसी कारण के।

(अविनाश एक ठंडी सांस भरता है।)

अविनाश— तुम जानते हो चन्नू, यह कैसे होता है?

कुंवर— क्या कैसे होता है?

अविनाश— यही कि तुम लता जैसी मारक लड़की को देखते हो ......

कुंवर— मैं समझा। और उसके प्रेम में पड़ जाते हो।

अविनाश— फिर ......

(अविनाश कुछ घबराया लगता है। वह भोजन की मेज़ पर जाता है और ठण्डी पड़ी चाय का प्याला मुंह से लगा लेता है।)

अविनाश— चन्नू।

कुंवर— हां।

अविनाश— **(कुछ क्षण बाद)** चन्नू।

कुंवर— क्या भई।

अविनाश— क्या तुम्हें भी ऐसा लगता है कि दिल में कुछ खाली खाली ...... मानों आत्मा में कोई छेद हो गया हो।

कुंवर— **(जोश से)** हां, हां।

अविनाश— अच्छा! तो तुम क्या करते हो?

कुंवर— मैं कुछ काकटेल के पैग ले लेता हूँ। या फिर सैण्डविच भी खा सकते हो।

अविनाश— **(बुरा मानते हुए)** तुम समझे नहीं।

कुंवर— वैल, तो तुम समझाओ।

अविनाश— मेरे घर में एक दर्जन आदमी हैं, फिर भी दिल अकेला अकेला रहता है।

कुंवर— तुम कोई टॉनिक पीओ।

अविनाश – नहीं, मैं जानता हूँ दिल क्या पीना मांगता है। प्रेम की घूँटें।

कुंवर – ठीक, ठीक-ठीक। मैंने भी प्रेम पाने के लिये तीन वार शादी की थी।

अविनाश— अच्छा?

कुंवर— हाँ, जब मैं इंगलैण्ड में था तो एक ब्राज़ीलियन से शादी की थी, जो दो मास बाद एक फ्रांसीसी के साथ भाग गई।

अविनाश— अच्छा!

कुंवर— मैं क्रोध में भर कर फ्रांस पहुंचा और वहाँ एक ईरानी सुन्दरी के साथ रहा। पर उसने पन्द्रह दिन बाद तलाक़ दे दिया।

अविनाश— अच्छा!

कुंवर— फिर मैं स्पेन पहुँचा। वहाँ मेरी प्रेमिका के पूर्व-प्रेमी ने विवाह के समय एक पुरुष के संसार में रहने की दुहाई दी। सो वह स्पेन में रहा और मैं घुमक्कड़ बना रहा।

अविनाश— मुझे बड़ा खेद है।

कुंवर— खेद किस बात का! मैं एक्सपर्ट हो गया हूँ। ये तो पत्नियाँ हैं और प्रेमिका तो एक रेखा में दिल्ली से नई दिल्ली तक पहुँच जायंगी।

अविनाश— पर ......

कुंवर— हां, मानता हूँ। उनकी तो बलखाती रेखा होगी— मसूरी से राजपुर तक।

अविनाश— ओह !

कुंवर— वैल, आई एम सौरी। हाँ, तो तुम प्रेम के बारे में कह रहे थे। पर लता को छोड़ना भी ......

अविनाश— हाँ, तो मैं प्रेम के बारे में कह रहा था। लता एक सुन्दर लड़की है परन्तु विवाह करने योग्य नहीं।

कुंवर— तुम मुझसे जल्दी पहचान गये।

अविनाश— किन्तु यह दूसरी लड़की ......

कुंवर— कौन दूसरी?

अविनाश— वही जिसके बारे में मैं कह रहा था।

कुंवर— तुम किसी के बारे में नहीं कह रहे थे। तुम्हारा मतलब है कि......।

अविनाश— मैं असली प्रेम को पा गया हूं।

कुंवर— कौन है वह ?

अविनाश— मैंने उसे रिंक पर स्केटिंग करते देखा है। वह एक कविता है। चन्नू, सारा स्वास्थ्य, सुन्दर वायु और ... और लबालब।

कुंवर— तुमने उससे बातें कीं ?

अविनाश— मेरी हिम्मत नहीं हुई। वह मुझसे इतनी ऊपर लगती है।

कुंवर— क्या बहुत लम्बी है?

अविनाश— बुद्धू राम, आत्मा में, आत्मा की शक्ति में।

कुंवर— अच्छा।

अविनाश— पर मैं उससे एक दिन अवश्य बात करूँगा।

कुंवर— वैल।

अविनाश— फिर मै उससे विवाह कर लूँगा ।

कुंवर— विवाह का नाम सुन कर ध्यान आया। जब मैं यहाँ आया तो बिन्नी कह रही थी कि तुम उससे विवाह कर रहे हो।

अविनाश— कल तक यह समाचार सत्य था ।

कुंवर— और तुम कहते हो कि तुम उसे छोड़ना चाहते हो।

अविनाश— हां।

कुंवर— वैल, तुम युवतियों को नहीं पहचानते।

अविनाश— पर मुझे एक बहाना मिल गया है ।

कुंवर— **(बात काट कर)** तुम मुझे अपना मित्र मानते हो ?

अविनाश— लंगोटिया।

कुंवर— जानते हो मैंने तीन विवाह किये हैं ?

अविनाश— मुझे अभी अभी पता चला है।

कुंवर— मान जाओ कि मैं तुमसे अधिक अच्छी तरह से स्त्री को अन्दर तक खोल कर पढ़ सकता हूँ।

अविनाश— मान लिया।

कुंवर— बस, तो मैं तुम्हारी सहायता करूंगा।

अविनाश— क्या मतलब ?

कुंवर— वैल, लता को यह समझाने का काम कि तुम उससे शादी नहीं कर सकते मेरे ऊपर छोड़ो।

अविनाश— मेरे प्यारे चन्नू! **(गम्भीरता से)** पर कुंवर।

कुंवर— क्या ?

अविनाश— तुम उसे समझा सकोगे ?

कुंवर— अच्छी तरह। मैंने स्त्रियों को जानने के सिवाय किया किया है। बस, तुम हाँ हूँ करते रहना।

अविनाश— तुम उसे आसानी से समझा सकोगे?

कुंवर— चुटकियों में।

अविनाश – चतुराई से।

कुंवर— भेड़िये की तरह।

अविनाश— ओ मेरे प्यारे चन्नू। (**महाराज काठपुर के गले से लिपट कर चूम लेता है।**)

(तभी सोने के कमरे में से लता निकलती है।)

लता— यह क्या?

(मानना पड़ेगा कि लता को शृंगार करना आता है। अविनाश की रोकते भी सर्द आह निकल पड़ती है। महाराज काठपुर सीटी बजाते हैं।)

लता— (**महाराज काठपुर से एक अन्दाज से**) यह क्या?

कुंवर— मानव रेस को आरम्भ करने का सिगनल।

अविनाश— रेस माने दौड़ या जाति।

कुंवर— दोनों।

(सब हँस पड़ते हैं।)

लता— (**अविनाश से**) मैं तैयार हूँ।

कुंवर— (**टोक कर**) कहाँ के लिये?

लता—नृत्य के लिये।

कुंवर— अविनाश के साथ?

लता— हाँ, अविनाश के साथ।

कुंवर— **(चश्मे से चतुराई चमकाते हुए)** अविनाश तुम्हारे साथ नहीं जा रहा।

लता— पर उसने तो कहा था।

कुंवर— उसने अपनी राय बदल दी है।

लता— पर क्यों ? मैं तैयार होकर आई हूँ।

कुंवर— विन्नी, मैं कुछ कहूं ?

लता— बोलो।

कुंवर— मैंने तुम्हें क्यों छोड़ा ?

लता— क्योंकि तुम ईर्ष्यालु थे।

कुंवर— नहीं।

लता—**(खतरा दिखलाते हुए)** मैं प्रतिदिन निकलने वाले तारों के समान स्थिर थी।

कुंवर— रात में तारे एक स्थान पर निकलते हैं, पर रात में तुम्हारा पता ठिकाना नहीं मिलता था।

लता— क्या कहा ?

अविनाश— लता, यह अपनी बकवास लगा रहा है।

कुंवर— **(संभल कर मुस्कराता है)** अरे, मैं अपना पचड़ा ले बैठा। एक सैण्डविच खा लूँ। **(मेज पर जाकर दो सैण्डविच खा लेता है।)**

कुंवर— **(मुंह भरे भरे)** विन्नी, अविनाश ने इरादा बदल दिया, क्योंकि तुम उसके साथ सुखी नहीं रह सकती।

लता— क्यों ?

कुंवर— तुम मेरे साथ सुखी रह सकती थीं ?

लता— क्यों नहीं ?

कुंवर— बस, इसी कारण।

लता— क्या मतलब ?

कुंवर— जो मेरे साथ सुखी रह सकता है वह अविनाश के साथ सुखी नहीं हो सकता। यह एक छोटी जगह में प्रेस करता है।

लता— मतलब यह है कि अविनाश मुझे धोखा देना चाहता है।

कुंवर— मेरी सब पत्नियों में तुम सबसे जल्दी समझती हो।

लता— **(चीख कर)** अविनाश !

अविनाश— **(बिगड़ कर)** गधे !

कुंवर— **(जल्दी जल्दी)** छोटी जगह है। टूटा फूटा प्रेस। जहां घूमने की कोई जगह नहीं है, न फिरने के लिये कोई स्थान। जहां नृत्य के लिये कोई नर नहीं मिलेंगे, संगीत के लिये संगति। जहां मनुष्य का लगाया एक बाग है, तो भगवान के लगाये सौ बाग। जंगली जगह। पेड़-पौधे और हवा जिन्होंने सभ्यता को दूर भगा दिया है।

लता— चुप रहो।

कुंवर— अविनाश बड़ा भला लड़का है। वह तुम्हारा पूजन करता है। वह तुम पर दया करता है। तुम उसे नहीं निभा सकोगी। मैं जानता हूँ और वह भी जानता है कि उस स्थान पर क्लियोपैट्रा भी सुखी नहीं रह सकती, थियोडोरा भी, यहां तक कि नूरजहां भी। वह तुम्हारा कितना ध्यान रखता है !

लता (चीख कर)— बको मत।

कुंवर— बेचारा अविनाश।

अविनाश— मैं आऊँ और तुम्हें चूमते ······ ।

कुंवर— भाई, जो बीत चुकी सो बीत चुकी। पता नहीं कितनी बार हम ······ ।

लता— **(शान्त होते हुए)** अब मेरी समझ में आया। तुम भी जानते हो और मैं भी जानती हूँ कि अब चन्नू से मेरा कोई मतलब नहीं। तुम्हें इस खुर्राट से जलने की कोई ज़रूरत नहीं।

अविनाश— मैं नहीं जलता।

लता— **(चीख़ कर)** तुम नहीं जलते। तुम आदमी कैसे हो ?

अविनाश— मैं ······ ।

लता— बनो मत। मैं जानती हूँ। कोई चुड़ैल तुम्हें मुझसे छीन रही है।

अविनाश— नहीं तो।

लता— कौन है वह ?

कुंवर— वैल, सब ग़लत है। ऐसा नहीं हो सकता।

लता— कौन है वह ? क्या नाम है उसका ? **(सैनिक भाव से हाथ कूल्हों पर रख लेती है।)**

कुंवर— मैंने कहा बिन्नी, तुम्हारे अन्दर कहीं न कहीं स्पेनिश रक्त का मिश्रण अवश्य है।

अविनाश— सुनो लता।

लता— मैं नहीं सुनूँगी।

कुंवर— मेरी तीसरी पत्नी स्पेनिश थी। मुझे अच्छी तरह याद है ······

लता— शट अप।

कुंवर— ओह वैल। मैं तो वैसे ही कह रहा था।

लता— अच्छा, तो तुम मुझ से छुटकारा पाना चाहते हो। तुम मुझे छोड़ देना चाहते हो। एक ········ एक ······

कुंवर— एक पहनी हुई कमीज़ की तरह।

लता— हां, एक पहनी हुई कमीज़ की तरह। तुम मुझे फेंक देना चाहते हो एक········

कुंवर— एक टुथ-पेस्ट की खाली ट्यूब की तरह।

लता— शट अप।

कुंवर— अच्छा।

लता— तुम इतनी आसानी से छुटकारा नहीं पा सकते।

अविनाश— लेकिन लता।

कुंवर— लेकिन लता।

लता— **(चीख़ कर)** लेकिन लता, लेकिन लता, लेकिन लता! **(झपट कर भोजन की मेज पर जाती है। एक प्याला उठाकर जमीन पर फेंकते हुए)** यह रहा!

(टूटने की आवाज़ से एक लड़का नौकर आता है।)

नौकर— आपने घन्टी बजाई बहूजी।

लता— **(दूसरा जोड़ा फेंक कर)** और यह!

(वह प्याला रानी को बुलाता है।)

रानी— जी बहूजी।

लता— और यह। **(चीनीदानी और दूधदानी भी फर्श के खण्डहरों में शामिल हो जाते हैं।)**

अविनाश— लता, अपने को सम्भालो।

कुंवर— वैल, बिल्कुल ठीक। चाय का सैट पैसों से आता है।

(चीख मार कर लता बेहोश होकर गिर पड़ती है।)

रानी— पानी पानी।

नौकर— नहीं, अदरक का रस।

अविनाश— यूडीकोलोन लाओ।

कुंवर— नहीं, पोदीने की चटनी। या फिर सैण्डविच।

रानी— हवा लगने दो।

नौकर— जूता सुंघाओ।

कुंवर— हथेली पीटो और सिर पर बैठ जाओ।

अविनाश— **(गरज कर)** सब चुप रहो।

(धीरे धीरे शान्ति छा जाती है।)

अविनाश— **(नौकर से)** किसी डाक्टर को बुला ला।

(नौकर चला जाता है।)

अविनाश— रानी, अपनी बहूजी को उठा कर सोने के पंलग पर लिटा दे।

(सहारा दे लता को रानी की गोद में पकड़ा देता है जो धीरे धीरे बगल के कमरे में चली जाती है।)

अविनाश— **(थके स्वर में)** चन्नू, तुम क्यों यहां चहल कदमी कर रहे हो?

कुंवर— मेरी खुद समझ में नहीं आ रहा। शायद तुम्हें नैतिक सहायता देने को।

अविनाश— एक डाक्टर को पकड़ लाओ।

कुंवर— नौकर गया है।

प्रविनाश— दूसरे को बुलाओ। दर्जन को बुलाओ।

कुंवर— (**सहानुभूति से**) मैं जानता हूँ तुम पर क्या बीत रही है। पर मैं लता को जानता हूँ। साधारण घटना है। हमारी शादी से बाद की सुहागरात से दो सप्ताह पहले की बात है। मैंने इसके बिना बाहों के ब्लाउज़ को कुछ कह दिया था। तुमने कच्छ का भूकम्प पढ़ा है।

प्रविनाश— बाहर जाओ।

कुंवर— अच्छा।

प्रविनाश— और बिना डाक्टर के अन्दर मत घुसना।

कुंवर— बिल्कुल नहीं, चाहे मुझे अस्पताल में चोरी करनी पड़े।

(कुंवर के जाने पर अविनाश की व्याकुलता बढ़ जाती है।)

प्रविनाश— रानी।

रानी— जी।

प्रविनाश— लता की तबियत कैसी है?

रानी— छाती छुक छुक सी चल रही है जी।

प्रविनाश – (**कड़े स्वर में**) मैं तुमसे रेल चलाने को कब कह रहा था?

(रानी झुंझला कर चली जाती है। नौकर द्वार पर आता है।)

नौकर— बाबू जी, डाक्टर।

प्रविनाश— मैं इस वक्त किसी से नहीं मिलना चाहता।

नौकर— (**झिझक कर**) बाबू जी, डाक्टर।

प्रविनाश— क्या, डाक्टर? तो मेरा मुंह क्या ताक रहा है। बुलाकर ला।

(नौकर चला जाता है। कुछ पल बाद द्वार पर एक युवती खड़ी

दिखाई देती है— कविता सी, स्वस्थ। अविनाश के ओंठ सूर्य को देख कमल के समान खिल उठते हैं। वह कुछ कहना चाहता है, पर ज़बान नहीं मानती।)

अविनाश— गट् (**थूक निगलता है**।)

युवती-- क्या कहा आपने ?

(अविनाश कुछ आगे बढ़ता है। युवती कमरे में आती है।)

अविनाश— ऐसा नहीं हो सकता।

युवती— मेरी समझ में नहीं आया।

अविनाश-- (**दुबारा थूक निगलकर**) मेरा मतलब है ······ कहना यह है ······ मैंने आपको देखा है।

युवती-- अच्छा। कहाँ ?

अविनाश-- रिंक पर।

युवती-- हाँ देखा होगा। मैं बहुधा स्केटिंग करती हूँ।

अविनाश-- हाँ, मैंने आपको वहाँ देखा था ······ रिंक पर ······ यानी आपको रिंक पर देखा था ······ आप स्केटिंग कर रही थीं।

युवती— ठीक, मेरा मरीज़ कहाँ है ?

अविनाश— मरीज़ !

युवती— मुझे सड़क चलते रोक कर बताया गया कि यहाँ कोई बीमार है।

अविनाश— हां, मेरे मित्र का नर्वस ब्रेकडाउन हो गया।

युवती— नारी मित्र का।

अविनाश— जी।

युवती— मुझे दिखलाइये।

अविनाश— आपका मतलब है आप डाक्टर हैं।

युवती— जी।

अविनाश— मेरा मतलब है। आप बैठिये न!

युवती— देखिये, मेरे पास समय बरबाद करने को नहीं है। आप मरीज़ नहीं दिखाना चाहते तो मैं जाती हूँ।

अविनाश— पर वे आप से इस हालत में नहीं मिल सकतीं।

युवती— क्यों?

अविनाश— क्योंकि उनकी तबीयत खराब है।

युवती— **(बिगड़ कर)** क्यों साहब, आप हमेशा से ऐसे हैं या कभी कभी हो जाते हैं?

अविनाश— मैं जानता हूँ, मैं मूर्ख हूँ।

युवती— अब आपका दिमाग़ ठिकाने आया है।

अविनाश— आपको इस तरह आते देख मेरा दिमाग़ फेल हो गया।

युवती— आपने बुलाया था, इसलिये आना पड़ा।

अविनाश— आप समझीं नहीं। मेरा मतलब है मैंने आपको स्केटिंग करते देखा था।

युवती— यह आप पहले कह चुके हैं।

अविनाश— श्रीमती जी ······

युवती— कुमारी अल्पना दत्त।

अविनाश— भगवान का सौ सौ धन्यवाद है।

अल्पना— मैं समझी नहीं।

अविनाश— कुछ नहीं, कुछ नहीं। अब कुछ अलग·····

अल्पना— बात क्या है ?

अविनाश— मेरा सांस भर आया ।

अल्पना— सांस की कमी के लिये लॉलीपौप चूसा करिये। हां अब मरीज़······

अविनाश— ज़रूर ज़रूर। (**अन्दर के कमरे के द्वार की ओर जाता है और धीरे से पुकारता है।**)

रानी— (**आती है**) जी हां।

अविनाश— लता कैसी है ?

रानी— जी, सो रही हैं।

अविनाश— बहुत बढ़िया। देखो जगाना मत। (**अल्पना के पास वापिस आकर**) रानी कहती है मरीज़ सो रहा है।

अल्पना— (**सिर हिलाती है**) स्वाभाविक है। भयंकर हिस्टीरिया के बाद नींद आती है।

अविनाश— पर आपको हिस्टीरिया का कैसे पता चला ?

अल्पना— चीनी के टुकड़ों से। ख़ैर, उन्हें सो लेने दें।

अविनाश— बैठिये। आप चाय लेंगी।

अल्पना— चाय ! (**हँस कर**) कहाँ है ?

अविनाश— ओह, फर्श पर ! पर और आर्डर दिया जा सकता है।

अल्पना— रहने दीजिये। मुझे चाय का शौक नहीं।

अविनाश— कोई बात नहीं। आप बंगाली हैं या पंजाबी ?

अल्पना— मैं भारती हूँ।

अविनाश— ओह, माफ कीजिये। मेरा नाम अविनाश है।

अल्पना— क्या आप यहीं रहते हैं ?

अविनाश— (**कटुपन से**) बिल्कुल नहीं। मैं सॅवाय में ठहरा हूँ। अपने चाचा के साथ।

अल्पना— चाचा के साथ।

अविनाश— जी, वे कई मकानों के मालिक हैं।

अल्पना— तभी मैंने आपको ठीक समझा था।

(अविनाश अल्पना के मुख की ओर घूरे जाता है। अल्पना कुछ व्याकुलता अनुभव करती है।)

अल्पना— आप मेरी तरफ इस तरह देखना बन्द करने की कृपा करेंगे ?

अविनाश— मैं आपकी ओर इस तरह से नहीं देखता हूँ। देख भी रहा हूँ तो अपने बिना चाहे।

अल्पना— अच्छा ! ऑटोमेटिक। यह तो आपने चिकित्सा की एक आवश्यक बात बताई। एक मोहक सुन्दरी को देख कर मुख की मछलियां का अचेतन तड़पना।

अविनाश— (**क्रोध में**) यदि मैंने आपको आकुल बनाया हो तो मुझे दुख है।

अल्पना— (**हँस कर**) आप मुझे आकुल बनायेंगे। मैंने आपको क्या व्याकुलता दिखाई। मेरे नाड़ी तन्तु मेरे हाथ में हैं।

अविनाश— आपके क्या ?

अल्पना— नाड़ी तन्तु। वे त्वचा का पीला पड़ना और दमकना दिखाते हैं। दूसरे शब्दों में क्या मैं लजाई थी ?

अविनाश— अच्छा, मैं समझ गया।

(बातचीत कुछ क्षणों के लिये समाप्त हो जाती है।)

अविनाश— आप जानती हैं आपका डाक्टर होना सुनकर मैं आश्चर्य-चकित रह गया?

अल्पना— अधिकतर पुरुष अचम्भे में पड़ जाते हैं।

अविनाश— मेरा मतलब है आप डाक्टर नहीं लगतीं।

अल्पना— क्यों डाक्टर को कैसा दीखना चाहिये?

अविनाश— कुछ थका सा! कमर झुई हुई। दुनिया से निराश सा।

अल्पना— **(खिलखिलाकर हँस पड़ती है।)** आपकी सहानुभूति के लिये धन्यवाद। पर डाक्टर होना इतना बुरा नहीं है। मेरी प्रेक्टिस खूब चलती है। धन काफी है। मैं सिनेमा देखती हूँ। खेलती हूँ। अपनी छुट्टियां घूम कर बिताती हूँ। मैं अपने काम से प्यार करती हूँ। अपने खेल से प्यार करती हूँ। अपने जीवन से प्यार करती हूँ।

अविनाश— आप अद्भुत हैं।

अल्पना— मैं अपने आनन्द का एक एक पल कमाती हूँ और संभाल कर व्यय करती हूँ। मैं अच्छे कपड़े पसन्द करती हूँ। अच्छा खाना खाती हूँ। ठाठ से रहती हूँ। जीवन भी क्या सौन्दर्य है यदि व्यक्ति एक कार्यकर्त्ता हो और जीवित हो। अच्छी नसें, अच्छा रक्त-प्रवाह, स्वस्थ मछलियां। मेरी बाहें देखिये, लोहे के समान।

अविनाश— अद्भुत।

अल्पना— **(साड़ी ऊपर उठाती हुई)** और मेरी टांगें देखिये, चट्टान के समान।

अविनाश— **(शरमा कर)** जी।

अल्पना— **(जोश में)** छू कर देखिये।

अविनाश— नहीं, नहीं।

अल्पना— **(मुस्करा कर)** आप शरमा रहे हैं।

अविनाश— **(सच बात को मना नहीं कर पाता)** हां। मेरे नाड़ी तन्तु आपकी तरह अधिकार में नहीं हैं।

अल्पना— क्यों? क्या आप एक कदली स्तम्भ समान श्वेत, चिकनी जांघ को प्रकृति का उदार उपहार समझकर देख नहीं सकते।

अविनाश— मैंने कभी प्रयत्न नहीं किया।

अल्पना— **(जोश में)** तभी हमारी जाति का स्वास्थ्य गिरा हुआ है। आज सड़कों पर देखो नारियां प्रकृति पर विद्रूप करती चली जाती हैं। स्त्री नग्न रहेंगी तो ढीला लटका पेट, पतली सींक सलाई टांगे नहीं दिखायेंगी। आजकल नक़ल चल रही है बुरी बातों की। पेंट किया और नृत्य करने चल दीं। अन्दर से सब खोखला। स्त्री वास्तविक सुन्दर तभी बनेगी जब वह अपनी कुरूपता को छिपा नहीं सकेगी।

अविनाश— आपका अर्थ है सब को नग्न फिरना चाहिये।

अल्पना— वही बात। मेरा अर्थ है देह के प्रति स्वस्थ भावना रखने का। कई देश हैं जहां स्त्रियां बिना कुछ पहने नहाती हैं। क्या उनका कुछ बिगड़ जाता है। हमारे यहां स्त्रियों को बचपन से पुरुष से डरना सिखाया जाता है। वही मनोविज्ञान हम सब को अपनी मां से जन्मजात मिलता है। हम पुरुप से डरते हैं और स्त्रियां से चिपटने की कोशिश करते हैं।

अविनाश— आपकी बातों पर हां करना चाहते हुए भी मन नहीं मानता।

अल्पना— स्वस्थ भावना बनाने की बलिवेदी पर पायोनियरों को भेंट चढ़ना होगा, पर वे जाति को स्वस्थ कर जायेंगे— मानसिक तथा दैहिक रूप से। अच्छा, आप बताइये, मेरी जांघ देखकर, पिडली देखकर आप में प्रशंसा के भाव जाग्रत हुए या नहीं?

अविनाश — मेरे ......

अल्पना — और यदि कोई बुरे विचार आये हों तो अपने अस्वस्थ मन के कारण। मैं तो एक चीज़ मानती हूँ। व्यक्ति को फ्रैंक होना चाहिये। हर बात में। तभी यह जीवन जीने योग्य बन सकता है।

अविनाश — तो मैं फ्रैंकली यह कहना चाहता हूँ कि आप जीवन का एक आवश्यक तत्व भूल गईं।

अल्पना — क्या? प्रेम!

अविनाश — हाँ, प्रेम! मैं आपकी देह का अभिनन्दन करता हूँ। आपके नाड़ी तन्तुओं का सम्मान करता हूँ। पर आप तब तक अधूरी हैं जब तक आपके भावनायें नहीं हैं।

अल्पना — कौन कहता है कि मैं भावनाशून्य हूँ। पर मैं बिदकती नहीं, बेकार की बातों पर लजाती नहीं।

अविनाश — मैं जानता हूँ।

अल्पना — मैं मूर्ख नहीं हूँ कि प्रेम को अपने जीवन से अलग कर लूँ।

अविनाश — ओह!

अल्पना — आपने ओह क्यों कहा?

अविनाश — **(झुंझलाकर)** माना आप अब तक मिली युवतियों में सुन्दरतम हैं, पर इसका अर्थ यह नहीं कि आप मुझे अनुचित रूप से दबायें। मैं दस बार आह कहूँगा जब तक मेरी मरज़ी होगी।

अल्पना — बुरा न मानें। बात यह है कि जितने मेरे सामने ओह कहते हैं सब अपना गला दिखाना चाहते हैं। **(ज़रा रुककर)** अविनाश जी, आप प्रेम के बारे में मेरी राय क्यों जानना चाहते हैं?

अविनाश — इसलिए कि जिस दिन मैंने आपको रिंक पर देखा था उसी

दिन समझ गया था कि आप ही वह ·········

अल्पना— आपका मतलब है आप मेरे से प्रेम करने लगे हैं।

अविनाश— जी हाँ। आप चौंकी नहीं ?

अल्पना— क्यों, चौंकने की क्या बात है ?

अविनाश— यह बात आप पहले भी सुन चुकी हैं ?

अल्पना— कई बार। पायोनियर होने की यह हानि है।

अविनाश— (दुःख से) तब तो किसी से आपने ······

अल्पना— नहीं, आप ग़लत समझे।

अविनाश— यानी और किसी से नहीं।

अल्पना— कोई नहीं।

अविनाश— तब क्या आप ······ आप समझ सकती हैं ······ क्या ऐसा हो सकता है ······ दूसरे रूप में, क्या यह सम्भव है?

अल्पना— फ़ैंकली आप यह पूछना चाहते हैं कि क्या मैं आप से किसी दिन प्रेम कर सकती हूँ।

अविनाश— आपने मेरे मुँह से बात छीन ली।

अल्पना— इसीलिये कि वह आप के मुँह से नहीं निकल सकती थी। यदि मैं किसी से प्रेम करती तो गुड मार्निंग की भांति स्वाभाविक रूप से कह देती।

अविनाश— आपने किसी से गुड मार्निंग कहा है।

अल्पना— नहीं मुझे ऐसा अनुभव नहीं हुआ।

अविनाश— बहुत बढ़िया।

अल्पना— बढ़िया या घटिया क्या ? मुझे उपयुक्त पुरुष नहीं मिला है,

इसका यह अर्थ है।

अविनाश— आप मिल चुकी हैं, पर आप पहिचान नहीं पाई हैं। कुमारी अल्पना दत्त ! जबसे मैंने आपको देखा है।

अल्पना— यह मैं जान चुकी हूँ।

अविनाश— लता मेरी मित्र ······

अल्पना— मुझे चिन्ता नहीं।

अविनाश— आप मुझ से घृणा करती हैं ?

अल्पना— नहीं, मैं आपको गम्भीरता से नहीं सोच सकती।

अविनाश— **(ठंडे स्वर में)** अच्छा ! आप अब थोड़ी देर शान्त रहें। मैं अपना काम करता हूँ। या आप मरीज़ बिना देखे जाना चाहती हैं तो जा सकती हैं।

(अविनाश जेब में से काग़ज़ निकाल कर देखता है।)

अल्पना— **(सोफे से उठ कर उसके पीछे आकर)** आप क्या कर रहे हैं?

अविनाश— मैं सोचता हूँ इतना समय बरबाद हुआ अब कुछ काम कर लूँ।

अल्पना— **(रतनारे नेत्र गोल कर)** काम।

अविनाश— प्रेस चलाना भी काम होता है। सवेरे आठ बजे से शाम के सात बजे तक काम करना।

अल्पना— काम।

अविनाश— मुझे रूखा न समझें। कल मुझे वापिस जाकर मशीन चलवानी है।

अल्पना— हां, हां, अपना काम करिये। क्या मैं आपके पास बैठ सकती हूँ।

अविनाश— क्यों नहीं ?

(अल्पना अविनाश की बगल में बैठ जाती है ।)

अल्पना— मैं तो सोचती थी कि आप चाचा के पास रहते हैं तथा मकानों के किराये .... ।

अविनाश— जी नहीं, मेरा प्रेस है ।

(शान्ति छा जाती है ।)

अलपना— आपका काम कैसा चल रहा है ?

अविनाश— ठीक है, धन्यवाद ।

(फिर शान्ति छा जाती है ।)

अल्पना— मेरा यहां बैठना आपको बुरा तो नहीं लग रहा ।

अविनाश— बिल्कुल नहीं ।

अल्पना — आप यह सोच लें कि मैं यहां नहीं हूँ ।

अविनाश — अच्छा ।

अल्पना— मैं आपको डिस्टर्ब कर रही हूँ, यह जान कर मुझे बड़ा दुःख होगा ।

अविनाश — आप चिन्ता न करें ।

अल्पना— अच्छा अब मैं बिल्कुल नहीं बोलूँगी ।

(कुछ शान्ति के बाद ।)

अल्पना— इस काग़ज़ में यह चित्र कैसा है ?

अविनाश— यह सिलिण्डर मशीन है ।

अल्पना— क्या कहा ?

अविनाश— **(जोश से)** सिलिण्डर मशीन । अभी तक मेरे पास ट्रेडल

मशीन थी। चैण्डलर और प्राइस। अब यह नई मशीन मंगाई है।

अल्पना— सिलिण्डर मशीन।

अविनाश— डोरज और पायने। तभी तो उसका साहित्य पढ़ रहा हूँ। जब तक अपने आप बाहर भीतर न जानें तब तक नोकर काम कर के नहीं दे सकते।

अल्पना— अविनाश, मुझे और बताओ।

अविनाश— यह फ्लैट बेड होता है। चेज़ पड़ा कसा जाता है और एक बड़े सिलिण्डर पर काग़ज़ ऊपर से घूमता है। पर आपको क्या मज़ा आयेगा ?

अल्पना— मुझे हर काम में मज़ा आता है। यह मशीन बड़ी भारी होगी ?

अविनाश— हां, बिना बिजली के नहीं चलती।

अल्पना— और उसका चलाना बड़ा मुश्किल होगा ?

अविनाश— नहीं तो। जिस चीज़ में मज़ा आये वह बड़ी आसान हो जाती है। और अब तो मैं मोनोटाइप लेने की सोच रहा हूँ।

अल्पना— **(ताली पीट कर)** बहुत सुन्दर।

अविनाश— बस, बिजली मिलने की देरी है। अब जाकर कोशिश करूँगा।

अल्पना - कोशिश से सब काम हो जाता है।

अविनाश— अब मैं पहले से भी अधिक काम करूँगा। क्या तुम सोचती हो कि मैं अपने टूटे दिल पर रोऊँगा। नहीं, मैं काम करूँगा और तुम्हें याद नहीं करूँगा।

अल्पना— शाबाश।

अविनाश— तुम्हें भूल जाऊँगा।

अल्पना— ठीक। (**उछल कर खड़ी हो जाती है और अपना बेग टटोलने लगती है।**)

अविनाश— (**घबरा कर**) अल्पना, क्या बात है ?

अल्पना— मैं थर्मामीटर ढूंढ रही हूँ।

अविनाश— क्या तुम्हें बुखार है ?

अल्पना— यही तो मैं जानना चाहती हूँ।

अविनाश— अल्पना !

अल्पना— बोलो, मैं सुन रही हूँ।

(थर्मामीटर मुँह में रख लेती है।)

अविनाश— अल्पना, अल्पना— मैं तुम से प्यार करता हूँ। मैं जानता हूँ कि तुम यह सुनते सुनते थक गई हो, पर मैं क्या करूँ मैं तुमसे प्यार करता हूँ।

अल्पना— अ-म।

अविनाश— मैं तुम्हारे बिना ज़िन्दा नहीं रह सकता। मैं काम करता हूँगा और तुम मेरी बगल में बैठी होगी। तुम मेरी जगह को पसन्द करोगी।

अल्पना— अ-म।

अविनाश— हमारे चारों ओर जीवन होगा। मशीनें चल रही होंगी। एक तरफ से कोरा काग़ज़ अन्दर जायगा और दूसरी ओर से छपा निकलेगा। मिट्टी का तेल और मोबिल आयल।

(अल्पना थर्मामीटर निकालकर देखती है।)

अल्पना— मुझे बुख़ार नहीं है।

अविनाश— अल्पना !

अल्पना— लेकिन मैं काँप रही हूँ और मेरी नाड़ी ११० पर चल रही है। और ......

अविनाश— और क्या ?

अल्पना— मेरा नाड़ी तन्तुओं पर अधिकार खो गया है।

अविनाश— अल्पना।

अल्पना— एक पल और। मैं अपने जीवन के सबसे कठिन निदान के सम्मुख हूँ। मेरी इन्द्रियाँ सब ठीक हैं। मुझे कहीं पीड़ा नहीं है, बुखार नहीं है, परन्तु नाड़ी ११० है। त्वचा पर मैं गरमाई अनुभव कर रही हूँ। गरदन पर सुरसरी सी दौड़ रही है। हाथ कांप रहे हैं। हृदय भाग रहा है।

अविनाश— तुम बीमार हो।

अल्पना— नहीं, मैं प्रेम में हूँ। गुड मॉर्निंग अविनाश।

(महाराज काठपुर दरवाज़े पर आते हैं।)

कुंवर— मैंने कहा अविनाश, ऊपर नीचे चढ़ते उतरते थक गया। एक सैण्डविच उठाकर देना ...... वैल, आई एम सौरी। (**मुख फेर लेता है**।)

(गुड मॉर्निंग सुनते ही अविनाश अल्पना को हाथों में भर कर चूम लेता है। तभी अन्दर के कमरे का द्वार खुलता है। लता बाहर निकलती है और फिर चीख़ मार कर गिर पड़ती है।)

———

शादी के पूरे एक साल बाद

"अजी, सुनना ज़रा," मैंने पुकारा।

"मैं उधर ही आती हूँ, मुझे भी एक बात कहनी है।" मेरी पत्नी ने वहीं से उत्तर दिया।

श्रीमती जी दनदनाती आ पहुँचीं। चूल्हे के पास बैठने से चेहरा कुन्दन सा चमक रहा था, मानो किसी एक्सप्रेस के एंजिन की आगे की लाइट हो। "कहो जी, क्यों बुलाया था?"

मैंने पूछा, "पहले तुम बताओ, क्या बात कहनी थी?"

श्रीमती जी की कनपटी भी लाल हो आई। शरमा कर उन्होंने तिरछी निगाहों से मेरी ओर देखा। "है कुछ बात। पहले तुम बताओ?"

मैं मर मिटा, "ओह, विवाह से पहले देखते समय युवती की यही अदा तो होती है जो हर युवक के दिल पर कापीराइट लेकर उससे हां कहलवा लेती है। हे मेरे आसमानी बाप, तूने कैसे कैसे हथियार ईजाद किये हैं!"

श्रीमती जी की आँखों में वह झलक थी जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

"और विवाह के बाद यह अदा केवल चलने वालों के लिये या यार दोस्तों के लिये रिज़र्व रख दी जाती है जिससे वे दिल पर हाथ रख कर कहें कि हाय हाय, फलाने को कैसी तीखी बहू मिली है। अरी खुदा की बन्दी, हमारे दिल पर पेटैन्ट की मोहर लगाने के बाद कम से कम दिन में एक बार तो यह झलक दिखा दिया करो।"

"हटो जी, तुम बड़े वैसे हो। ······ बताओ न क्या कहना था?" वे मचल उठीं।

"नहीं, नारी प्रथम। एक यही निशानी तो आजकल के पुरुषों के शौर्य की परिचायक रह गई है।"

श्रीमती जी रूठ कर बोलीं, "यह तो मुझे पता था कि तुम अपनी करके मानोगे। अच्छा बताती हूँ। ······ अगले सप्ताह हमारे विवाह की पहली साल-गिरह है।"

मैं उछल पड़ा, "जनाब यही अर्ज़ करने को तो मैंने आपको यहाँ तक आने का कष्ट दिया था। बस, तो तय रही। कर डालो एक दावत।"

"तुम मरदों का क्या! कह दिया कर डालो न एक दावत! बिना सोचे समझे।"

मैं अपनी श्रीमती जी की बुद्धि का कायल हूँ। चुपचाप कान फट-फटा लिये। "हां भैना, हम सब तो उल्लू के पट्ठे हैं। बताओ क्या क्या सोचा जाय।"

श्रीमती जी ने और पंख पसारे। उनकी वाणी में स्वत्व का ओज और आ घुसा था, और थी मेरी बुद्धि के प्रति उपेक्षा। "यही सोचना है कि साल-गिरह मनानी है या नहीं, मनानी है तो किसे किसे बुलाना है, बुला कर क्या क्या खिलाना है? एक बात है!" उनके स्वर में चुनौती थी।

मैं गिड़गिड़ाया, "सालगिरह मनानी है यह तो तय समझो। मित्रों को बुलाना है बाहर वालों को नहीं। हाँ, क्या खिलाना है यह समस्या सामने है। दावत कई तरह की होती है—गीली सूखी, तर खुश्क, खोमचे वाले की होटल की, आलु के भल्ले की, चाय नमकीन की, पूरी कचौड़ी की। ख़ैर यह भी तुम जानो। मैं तो यही सलाह दे सकता हूँ कि जो

दावत में आये उसे अगले दिन सवेरे तक खाने की ज़रूरत न पड़े।"

श्रीमती जी ने इस अवहेलना की दृष्टि से मेरी ओर देखा कि मेरी हड्डी हड्डी में कम्पन व्याप गई। रीढ़ से यह सिहरन निकलने पर मेरी जान में जान आई। मैं उनकी मन की अर्धचेतना की राय से एकमत हो उठा कि किस गधे ने मुझे एम. ए. में पास कर दिया। ख़ैर, एल. टी. में तो मैंने पाल्सन के कई बक्स खाली कर दिये थे।

वे तरस खा कर बोलीं, "तुम लोग बाहर अपना काम कैसे चलाते हो ······ देखो, पार्टी में कम से कम पांच कन्या, पांच लंगर अवश्य होने चाहियें।"

दिमाग़ की क्या आला उपज थी, पर मैं ठहरा कुढ़मग़ज़। बोला, "क्यों, अपने अनुभव सुना कर ललचाने को या उनका सम्बन्ध तय करने को यह दावत दे रही हो?"

वे बुरी तरह झल्ला उठीं। वे कहने जा रही थीं, 'कैसे मूर्ख से पाला पड़ा है।' किन्तु नहीं, उन्होंने अपने को रोक लिया, क्योंकि वे एक हिन्दू पतिव्रता स्त्री हैं। "मेरा मतलब बिनब्याहों से नहीं था। मैं चाहती हूं कि शास्त्रों के अनुसार शुभ दिन पांच युवक और पांच युवती कम से कम हों तो बहुत अच्छा।"

शास्त्रों का अपनी सुविधानुसार बदल कर अर्थ लगाना देख मैं उनकी चतुरता पर दंग रह गया। मैंने सिर हिला कर हामी भरी।

"तो काग़ज़ लाकर लिखो। एक लता और उसके पति, दूसरे देवेश तथा उसकी पत्नी, तीसरी रमा, चौथी कान्ता, पांचवीं वासन्ती, छटे आनन्द कुमार, सातवें तुम्हारे मित्र टुंडे मास्टर ···" वे 'टुंडे मास्टर' कह कर खूब हँसी।

मैंने मन ही मन सरस्वती मैया पर पाच पैसे का प्रशाद चढ़ाया कि

उनके हँसने से वह सूची अधूरी रह गई, नहीं तो पता नहीं जाने कहाँ जाकर समाप्त होती। यदि मेरी दुआओं में शक्ति होगी तो अगले साल ही मास्टर किसी स्कूल का प्रिंसिपल हो जायगा।

मैंने डरते काँपते एक तरमीम पेश की, "तुमने हेमन्त और उसकी पत्नी का नाम लिया ही नहीं।"

उनकी सुन्दर तोते के समान नाक कुछ चढ़ गई। "हेमन्त को तुम चाहो तो बुला लो। पर उसे बात करने का सलीका कहाँ है! न उसमें और न उसकी पत्नी में।"

मैंने अपने प्रिय मित्र का पक्ष ले विरोध किया। "नहीं, नहीं, वह तो बड़ा हँसमुख है। संसार में उसके सिवाय शायद ही कोई जानता हो कि व्यंग, चातुरी, वक्रोक्ति, हास्योक्ति, व्याजोक्ति, रसिकता, विनोद, ठिठोली में कहाँ और क्या अन्तर है।"

वे तिनक कर बोलीं, "हाँ, मुझे क्या पता नहीं था कि तुम उसकी ओर से बोलोगे। ख़ैर, मेरा क्या, बुला लो। फिर दावत फीकी रह जाय तो मुझ से मत कहना।"

मैं जान छुड़ाने की ग़रज़ से बोला, "हाँ, तो कुल मिला कर हमने चौदह आदमियों को बुलाना है।" मेरे दिल ने हँस कर बुद्धि की पीठ ठोकी कि उसने जिह्वा देवी से तेरह नहीं कहलवाया। "अब यह बताओ कि उन्हें खाने में क्या दोगी?"

मेरी पहली बात उन्होंने बिना चूं चपड़ किये मान ली मानो इतने सारे नाम गिनाने में अच्छी ख़ासी कसरत हो जाने से वे थक गई हों। "खाने के बारे में एक बात साफ कहे देती हूं कि तुम्हारे दोस्तों के लिये चूल्हे के सामने बैठ कर फुंकना मेरे बस का नहीं। फिर इतनी सारी मिलने वालीं आयेंगी, उनके साथ बातें भी तो करनी होंगी।"

मैं भी मान गया कि उस दिन चूल्हे के सामने जाना अपनी मौत बुलाना है। मैं सोच में पड़ गया।

पर उनकी बुद्धि ने डंड बैठक लगाई। पहले गोते में ही मोती हाथ था। "बस, बाज़ार से मिठाई नमकीन मँगा लेंगे। चाय का पानी रसोई में उबलता रहेगा जिसे रमलू केतलियों में लौट पलट कर दे जाया करेगा।"

मेरी आदत ही शक्की थी। बात बात में बाल की खाल निकालता था। यह तो उस नीली छतरी वाले का धन्यवाद है कि शादी के बाद से मेरी यह आदत बहुत कम हो गई थी। "चाय पार्टी. कुछ ······ मेरा मतलब है ··· तुम समझ गई होंगी ······"

मेरे पोंगेपन पर फिर उन्हें तरस हो आया। "क्यों, चीज़ काफी मँगा लेंगे। खूब पेट भर कर खाना। मैं शर्त लगाती हूँ कि यदि तुम चार रसगुल्ले एक साथ खा लो तो आठ दिन तक कुछ न खाओ।"

दिमाग़ की घुएडी खुल गई। कितनी महान मुश्किल! कितनी आसानी से हल हो गई थी! मुझे अपने चौंघटपने पर हँसी आई।

यह आज की नहीं हर दिन की कहानी थी। मैं प्रतिदिन पट गिरने का प्रयत्न करता था, पर हमेशा चारों खाने चित आता था।

वह दिन आ गया जिस दिन पिछले वर्ष रात के तीन बजे आग के चक्कर लगवा कर जंगली घोड़े को साधा गया था।

मैं इतना सध चुका था कि अपनी पत्नी की तसल्ली करने के लिये कान दबाये फटाफट दो कमीज़ और पांच पतलून बदल गया। और उन्होंने उस दिन वह साड़ी पहनी जो उन्हें विशेषतया प्रिय थी और जिसे न पहनने के लिये मैं उन्हें सौ बार कह चुका था।

दावत का समय हुआ और लोगों का आना आरम्भ। हमारे मित्र

कितने लायक हैं, यह उस दिन ही पता चला। सब हमारे लिये भेंट लिये चले आ रहे थे। उपहारों से ही उनका परिचय मिल रहा था।

भला सोचने की बात है कि विवाह को एक वर्ष हो चुका और रमाजी 'भाई के पत्र' उठाये चली आ रही हैं। मेरे दिमाग़ में फिर एक शक का कीड़ा उठा कि वे दरअसल भाई हैं या बहन। टुण्डे मास्टर एक बाल चिपकाने की शीशी ले आये थे और बैठे बैठे हांफ रहे थे मानो दो मन का बोझ उठा कर लाये हों। हांफने की सफाई में कहने लगे कि सारे शहर में घूम फिर कर यह सुन्दर उपहार पसन्द कर पाया हूँ। मुझे निश्चय हो गया कि शहर के किसी न किसी कोने में ज़रूर क्लियरैन्स सेल हो रही है।

जब सब निमन्त्रित आ चुके तथा अहसानों के बोझ से लादी अपनी दो दो सेर की भेंट दे चुके तो हरीश ने अपना नमूना पेश किया। एक बक्स और उस पर दो गुड़ियाँ। बक्स में लगे तार को दबाने पर वे खूब नाचतीं थीं। उसने कहा, "भगवान करे, भाभी हमेशा अपने साहब को इस तरह नचाती रहें।"

देवेश बोला, "गुड़ियों के कारण तो ऐसा मालूम पड़ता है कि भाभी जी साहब के इशारों पर नाच रही हों।" इस पर हेमन्त ने तुर्रा जोड़ा, "भई, नचाये कोई भी, इसमें इतना भेद नहीं। असल में तो दो साथ हैं। इसका क्या अर्थ है? हरीश का इससे क्या मतलब है?"

फिर देवेश उठ कर खड़ा हुआ। उसके हाथ में बच्चों के खेलने का प्लास्टिक का टब था जिसमें एक प्यारा बच्चा लेट रहा था। ऊपर एक फुव्वारा लगा था जिसमें रबर की गेंद दबाने से दूध की फुहार छूटती थी। उसने दूध की फुहार छोड़ी और मुझ से कहा, "दूधो नहाओ" और अपनी भाभी से बोला, "पूतों फलो।" श्रीमती जी यह छींटा पड़ते ही रंग से शराबोर हो उठीं।

अब हेमन्त की बारी थी। वह उठ कर बोला, "अब तक की प्रगति का नतीजा कोई न देख कर मुझे बड़े भारी दिल से अपने परम मित्र को यह उपहार देना पड़ता है।" उसने जेब से एक प्रश्नसूचक चिह्न निकाल कर मेरी ओर बढ़ाया। "हमें भाभी जी के सब्र की प्रशंसा करनी पड़ती है। और कोई होतीं तो क्या करतीं, यह सोच कर ही मुझे धुड़धुड़ी चढ़ी आती है। लेकिन हमें पूर्ण आशा है कि अगले साल वह हमारे मित्र को यह भेंट करने जा रही हैं।" कोट की दूसरी जेब से स्यामी जुड़वां बच्चे निकले।

सब खिलखिलाकर हँस पडे। बिल्कुल हमारी अपनी परम्परा थी। मैं भी हँसना चाहता था, परन्तु श्रीमती जी की ओर दृष्टि करते ही मुझे मानना पड़ गया कि हेमन्त में तमीज़ नहीं है।

हेमन्त का हाथ बढ़ा रह गया। श्रीमती जी ने खिलौना स्वीकार नहीं किया। यह एक तरह से उसका अपमान था। रंग में भंग होने वाला था। पर वाह रे मेरे दोस्त! इस बीहड़ कठिनाई में भी राह बना ली। मुस्करा कर हेमन्त खिलौना मेज़ पर रखता हुआ बोला, "अच्छा, हमारे से न लीजिये। जब भगवान देगा तब तो लेना ही पड़ेगा।"

पांच मिनट के अन्दर दूसरा बाँध भी टूट गया। हँसी कलकल करती निकल भागी।

ख़ैर, राम राम करके चाय के प्याले बने। देवेश अपना प्याला उठा कर बोला, "मैं भाभी जी की सेहत के लिये पीता हूँ।"

हेमन्त बोला, "मैं तो भाभी जी के लिये पीता हूँ जिनके लिये हमें यह दिन देखना नसीब हुआ। और इस खूसट को पैसे ख़र्च करने पड़े।"

मैं बोला, "तो फिर इसके लिये तो इनके मूछों वाले पिता जी को धन्यवाद दो।"

वे बिगड़ गईं। टेढ़ी निगाह करके बोलीं, "दोस्तों के साथ बैठकर तो इनकी ज़बान पर लगाम नहीं रहती। बात बात पर पिता जी तक पहुँच जाते हैं। यह कहाँ की बात है।"

हेमन्त हँसा, "भाभी जी, आप तो नाहक बिगड़ गईं। बेचारा उनकी मूछों की तारीफ ही तो कर रहा है।"

वे बोलीं, "आप को तो मूछें बुरी लगेंगी ही, क्योंकि मेरठ में सब मुछमुण्डे......"

देवेश ने वाक्य पूरा किया, "गुण्डे रहते हैं।"

मैंने सफाई पेश की, "तुम्हारा यह दोपारोपण वृक्षारोपण की तरह निराधार है। हमें देखो, हमें तो उनकी मूछें इतनी प्यारी लगती हैं कि हर समय उन्हें मूछों वाले पिता जी कह कर याद करते हैं।"

वे शायद बड़ी प्रसन्न हुईं, "और क्या, उनकी मूछों का बड़ा रोब है।"

देवेश ने हमें रोब के गड्ढे में से निकालना चाहा। "डर न दोस्त, मैं भी तुझे पैंठ से एक आने वाली मूछ खरीद कर ला दूंगा। तू भी उन्हें लगा कर रोब डालना।"

और हेमन्त ने कल्याण कर दिया। "बस, वे मूछें लगा कर अपने मूछों वाले पिता जी के पास चले जाना। फिर अपनी मूछें उतार हाथ में लेकर कहना— पिता जी, अब काफी रोब पड़ चुका, आप भी अपनी उतार डालिये; या— पिता जी, अब काफी है, हम दोनों एक दूसरे को पहचान गये हैं।"

ऊंट की कमर तो तिनका तोड़ देता है, पर यहां तो मूछों का उतारना ही क़यामत बरपा गया। दावत में वह हँसी का कुहरा फैला कि मुझे अपनी पत्नी का मुख देखना ही दूभर हो गया। उनकी शकल ही मेरा सहारा थी। मैं क्या करता, हँसी के सागर में डूबने उतराने लगा।

पार्टी पूरे समय चली। उसमें फिर दौर-दौरे आये, पर मुझे कुछ नहीं सुनाई दिया। मैं वह जलता तवा ...... नहीं जलते तवे पर तो पानी की बूँद गिर कर छुन्न करती है ...... तपता पत्थर हो गया जिस पर पड़कर आवाज़ें कुछ बुलबुले उड़ाकर विलीन होती रहीं।

हर ठहाके के साथ पार्टी फीकी पर फीकी पड़ती जा रही थी, किन्तु मैं क्या करता, घर आये मेहमानों को किस तरह बीच में विदा करता। उस पार्टी में मैं ग्रामोफोन का पार्ट अदा कर रहा था— हँसने पर हँस पड़ता, रोने पर रो उठता और शान्ति में गम्भीर था।

मुझे नहीं पता कि पार्टी किस समय निमटी। मैं सब को विदा कर पलंग पर आ पड़ा। घर का आवश्यक काम निमटा थोड़ी देर में श्रीमती जी भी आकर लेट गईं। हम दोनां के मुख एक दूसरे की ओर थे। लहमे में सांस भर कर वह बोलीं, "क्यों जी, सो गये क्या ?"

मैंने दिल थाम कर कहा, "सोने दो जी, बड़े ज़ोर से नींद आ रही है।"

वे बोलती रहीं, "हां, मेरे से बात करने में तो इन्हें नींद आती है। अभी कोई दोस्त आ गया होता तो रात के बारह बजा देते।"

मेरा दिल बोला, "तुम्हारे साथ तो मेरी पूरी रातें जगकर काली हो चुकी हैं।" पर होठों पर बुद्धि ने ताला लगा दिया।

मैं पिछले साल के इस दिन को सोचने लगा— हे भगवन्, क्या हर साल मेरा यह दिन ऐसे ही बीतेगा ! मैंने अपने कान पकड़ कर क्षमा मांगी।

वे फिर बोलने लगी थीं। बचपन में अवश्य इनकी माँ ने इन्हें बोलना सिखाने के लिये कौवे की ज़बान खिलाई होगी। "देखा, मेरा कहा न मानने का यह फल होता है। आज जैसा शुभ दिन ......" मेरा

हाथ कान की ओर उठता देख वे यह समझीं कि मैं उनके बोलने से तंग आकर अपने कान बन्द कर रहा हूँ। बस, क़हर टूटा। वे तिनकीं, भिनकीं और झट से करवट बदल डाली।

उस रात मैंने उन्हें किस तरह मनाया यह एक पारिवारिक भेद है।

———

पहाड़ खिसक गया था

माथा ऊँचा हो चला तथा कनपटी सफेद, पर भगवान को हमारा टेलीफ़ोन नहीं सुनाई दिया। हिन्दु-पुराण-काल में तो हर व्यक्ति के पास विमान होता था, जब भीर पड़ी तभी उड़कर भगवान को पीर सुना आया। अब यह विमान-विद्या संसार से लुप्त हो गई है। मेरे सब पुरखा मिलकर इन पश्चिमी वैज्ञानिकों का बेड़ा तार दें जो राकेट विमान बनाने के प्रयत्न में हैं।

जब प्रतिदिन स्नेह से सींचे सोलह आने अपने बाल ही धोखा दे रहे थे तब अन्य से क्या आशा रखी जा सकती थी। पर एक दिन भगवान के एजेण्ट हमारे पिताजी को बुद्धि-लहर आई। उन्होंने मेरी सुसराल ढूंढ ली। मैं ससुर साहब से मिलने इलाहाबाद गया और उन्होंने भले व्यक्तियों की भांति मुझे घर तक पहुँचाने अपनी युवती कन्या को भेजा।

क्या करूं जब पिताजी ने कन्या को बहू कहकर पुकारना आरम्भ किया, मित्रों ने भाभी कहकर छींटें कसे तथा साले सालियों के कुछ ऐसे वैसे पत्र आये तो मैंने भी लज्जा त्याग उस युवती कन्या को अपनी पत्नी समझना आरम्भ कर दिया।

डाक्टरी पुस्तकों में लिखा है कि यदि नारियों की ज़बान हिलनी बन्द हो जाय तो समझ लेना चाहिये कि उनके प्राण-पक्षी किसी शिकारी चिड़िया के पंजे में फंस गये हैं। हमारी पत्नी तो इतनी सीधी थी कि बहुधा मैं यही सोचता रहता था कि उनके प्राण यहाँ हैं या वहाँ। वह कभी कभी बोलती थी, पर जब बोलती थी तब पूरे दृढ़ निश्चय के साथ। एक दिन हम दोनों की ससुर साहब की मूछों को लेकर झड़प हो गई और नतीजा यह हुआ कि मुझे भी उस दिन से मूछें रखनी पड़ गईं।

मेरा दुर्भाग्य कि मैं अपने को बड़ा बुद्धिमान तथा तेजस्वी समझता

था। जब मूछें रखनी ठहरीं तो मैंने तय किया कि ऐसी रखी जायँ जैसी आज तक किसी की नहीं थीं। हिटलर, कर्ज़न आदि अपनी मूछों के कारण ही कितने प्रसिद्ध हो गये! मुझे हिन्दी का चार अक्षर बड़ा सुन्दर लगता है। बस, वही सुन्दर ४ मैंने अपने ऊपर के होठ पर बिठा लिया।

मुसीबत अकेले नहीं आती। एक मुसीबत आ चुकी थी। क्या? यह मैं खोलकर नहीं बताऊंगा। भुक्तभोगी समझ जायेंगे। अब मेरी मूछें देखकर सब मित्रों ने टोकना आरम्भ कर दिया। अरुण बोला— क्या यह झाड़ी मुंह पर उगा ली है? खुरच डाल इसे।

मैंने बड़ी शान्ति से उत्तर दिया— यह मेरठ के गान्धी बाग़ की सादी झाड़ी नहीं है। यह बम्बई के हैंगिंग गार्डेन्स की झाड़ी है जिसे देखने संसार भर के प्राणी आते हैं और आजकल तो अन्य नक्षत्रों में भी उसकी प्रशंसा पहुँच चुकी है तभी हम उड़नतश्तरियों के बारे में इतना सुन रहे हैं।

गिरीश ने पूछा— तुम्हारा मतलब क्या है?

मैंने हँसते हुए कहा— जैसे झूलने वाले बाग़ में झाड़ियों को काट छांट कर शेर, पहलवान, स्त्री आदि का रूप दे रखा है, उसी प्रकार यह मेरी मूछ नहीं, ४ का सुन्दर चिह्न है। ४ का अंक— आहा, कितना सुन्दर! मानो शेषनाग कुण्डली मारे पड़ा हो। या किसी बड़े ख़ज़ाने का नक्शा हो। या भारत की आत्मा गाँवों की पगडण्डी हो।

देवेन्द्र मुझसे भी अधिक ज़ोर से हँस पड़ा। उसे ऐसे नहीं हँसना चाहिये था जब कि हमारे अधिक अच्छे अर्धांग भी वहाँ एकत्रित थे। कहने लगा— ४ का अंक। बस, समझ गया। फ्रायड ने कहा कि हमारी मन की छिपी कामनायें अनजाने में प्रत्यक्ष रूप धारण कर लेती हैं। इसकी अन्तर्चेतना में चार विवाह करने की ललाम लालसा है।

अरुण की पत्नी बोली— और क्या पता ? शायद विधाता ललाट पर लिखने की बजाय ओठों पर लिख गये हों कि इनके चार बच्चे होंगे।

अरुण मुस्कराया— चार बच्चे ! भाभीजी की ओर देखो। पत्नी का अर्थ मैं लगा सकता हूँ पर बच्चा तो एक भी असम्भव।

दूसरी से तीसरी मुसीबत निकली। हमारी पंचवर्षीय योजना बाहर के व्यक्तियों के हस्तक्षेप से नष्ट हो गई। मैंने पत्नी को इतना समझाया कि अरुण को मज़ाक़ करने की बुरी आदत है। कि मज़ाक़ को गम्भीरता में नहीं बदलना चाहिये। कि हँसी हँसी में गलफँसी मत करो। कि तुम दुबली हो तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं, न तुम्हारे माता-पिता का कोई दोष है। कि दुबले तो भगवान के स्वयं बनाये हुए हैं और मोटे मसाला बहुत बच जाने पर ठेकेदार के थोप थोप कर डाले जीव हैं। कि यदि तुम फ्रांस आदि देश में होती तो अवश्य वीर माता का पदक प्राप्त करती। पर उसकी समझ में नहीं आया।

अगले साल मिजाज़ में उसकी प्रतिरूप, अक्ल में मेरी प्रतिरूप तथा शक्ल में तीसरे की प्रतिरूप एक कन्या-रत्न ने मेरे भाग्य उजागर कर दिये। पहले तो उखड़े पत्थर ही गिर रहे थे, अब मुसीबत की तेज़ वर्षा होने पर सारा का सारा पहाड़ खिसकने लगा।

मुलाकात का श्रीगणेश ही खराब हुआ। जब मैंने पहली बार उसके मुंह की ओर देखा, उसने मेरी ओर घूर कर देखा और बुक्का फाड़कर रो पड़ी।

अच्छी होने पर पत्नी का वर्षों का बन्द स्वर बांध तोड़कर निकल भागा। अब, मेरे दो ही काम रह गये थे— कालिज में अपना यांत्रिक भाषण सुनना और घर पर पत्नी का भ्रान्तिक भाषण सुनना। पर मैं भी नदी का चार टन दो मन का वह पत्थर हो उठा जो पानी का वेग कितना

ही बढ़ जाय फिर भी अपने स्थान पर स्थिर रहता है। यह मानना पड़ेगा कि चार पांच बार हिल मैं भी अवश्य गया।

अब तक का इतिहास तो यह था— मेरे हृदय ने बालों पर रखकर भेजा एक शक्तिशाली सन्देश भगवान को। भगवान ने पचास साल के हमारे मूँछ वाले ससुर उत्पन्न किये। उनमें से निकली मुच्छ-गुच्छ-विहीन मेरी पत्नी। पत्नी में से निकली मेरी मूँछ। मूँछ में से निकली किलकती बेटी।

रेखागणित की कैसी अजीब प्रमेय थी जिसको सिद्ध करने में लाखों वर्ष लगेंगे। और कोई होता तो इस गड़बड़झाला में फंस दिमाग़ व दिल गंवा बैठता, पर भला हो मेरी पत्नी का जो मेरे दुख सुख में पूरा हिस्सा बंटाती रही।

पुत्री उत्पन्न होने पर पत्नी के पहले भाषण का सार यह था कि घर बहुत छोटा है। बच्ची कहाँ खेलेगी, कहाँ सोयेगी, कहाँ पढ़ेगी। लबे सड़क है। कोई और ढूँढो। इसका मैंने बड़ी आसानी से हल निकाल दिया। पत्नी से कहा— मेरा मित्र है। तुम्हारा बताया नक्शा मैंने उसे समझा दिया है। म्यूनिसिपल बोर्ड से पास होकर आते ही वह किराये के लिये अपना मकान बनवाना शुरू कर देगा।

दूसरा मेरे सम्मान पर चोट थी। "तुम कुछ चिन्ता नहीं करते। एक ही जगह पर पड़े हो। तुम्हारे अन्य साथी तो प्रयत्न करके ऊचे ऊँचे ओहदों पर पहुँच गये हैं।" पर मैंने पिछले सम्मान पर मलहम ही नहीं लगाया, उसे दुगना भी कर दिया। मैंने पत्नी को गौरव से पड़ौसिनों को सुनाने के लिये मसाला दिया— अगले वर्ष मैं शहर का चेयरमैन बनने के लिये खड़ा हूँगा।

बच्ची मुझे देखकर रोती थी। इसके लिये पत्नी ने सलाह दी कि

वह मेरी मूँछों से डरती है, मैं मूँछें साफ करा आऊँ।

इतिहास अपने को दुहराता है। पर उलटा, यह पता नहीं था। फिर भी, मेरे हृदय में भरे वात्सल्य भाव ने ज़ोर मारा और भागा भागा नाई से मूँछों पर उस्तरा फिरवा आया।

मुन्नी मां की गोद में पड़ी थी। मैंने दौड़कर उसे उठा लिया। पर वह तो सफाचट मैदान को देख पहले से भी ज़ोर से रो पड़ी। पत्नी मुस्करा कर बोली-- मुन्नी को डैडी पसन्द नहीं। डैडी का चेहरा सुन्दर नहीं है।

मैं झल्ला कर गर्जा— मुझे आज से पीछे डैडी मत कहना। मैं किसी का डैडी नहीं हूँ।

एक तो मूंछों से सम्बन्ध विच्छेद। दूसरे पत्नी द्वारा केवल मुन्नी की सुनना, और मुझे सुनाना। तीसरे छोटी मोटी बातों की तथा धन की चिन्ता। मेरे दिल में मुन्नी के प्रति, स्वाभाविक था, एक गांठ पड़ गई।

एक दिन मेरी चाची मिलने आई। द्वार पर ही मैं मिला। बलायें लेती हुई बोलीं— बेटे के बच्चा पैदा हुआ है। बलिहारी जाऊं। बेटा हुआ है या बेटी।

मेरे मुँह से निकला— मुझे नहीं पता। अपनी बहू से पूछ लो।

यह सुन वह मुझे घूरती हुई अन्दर हरम में चली गई।

विवाह से कुछ दिन तक मैं बात करता था और पत्नी सुनती थी। फिर कुछ दिन पत्नी बोलती रही और मैं सुनता था। अब मुन्नी के होने पर हम दोनों बोलने लगे थे और मौहल्ले वाले सुनते थे। हमारी तथा चाची की राय सुन एक दिन यह भी आ गया कि मौहल्ले वाले बोलने लगे और मैं सुनने लगा। शरबती दादी पुपलातीं— अरे, मैं तो याको बच-पन से जाने हूँ। हमेसा को ऐसा ही रह्यो। कस्तूरी ताई व्याख्यातीं— इसका कुसूर नहीं, सारा इस डायन पढ़ाई का कुसूर है। बच्चा पैदा कर

दिया और सारा भार बहू के जिम्मे। शान्ति भाभी छेड़तीं— इसका तो दिल बहू से ना लगा है। विवाह से पहले यह दूध वाली छोरी से बहुत बातें करे था। ज़रूर कुछ बात है।

क्षण क्षण पर पहाड़ खिसकने का वेग बढ़ता जा रहा था। बड़े बड़े पत्थरों ने गिर कर स्थान स्थान पर सड़क बिल्कुल बन्द कर दी थी।

एक दिन गिरीश के घर दावत थी। सवेरे से पत्नी जाने के लिये साज शृंगार कर रही थी। कॉलिज से लौट कर मैं भी तैयार हो गया। पौने पांच बजे मैंने पत्नी को फिर आवाज़ लगाई— अजी, चलो न। समय हो रहा है।

पत्नी अन्दर से भुनभुनाई— तुम भी अजीब हो जी। एक घन्टे से कह रही हूँ कि दो मिनट में आ रही हूँ फिर भी पाँच पाँच मिनट में टोक देते हो।

आख़िर अपने दो मिनट में तैयार होकर वह बाहर निकली। बरामदे में खेलती मुन्नी को चलने के लिये गोद में उठाया तो बोली— अरे, मुन्नी की नाक बह रही है। इसे तो डाक्टर को दिखाना पड़ेगा।

मैंने विनोद किया— तुम्हें यह नहीं पता, एक आदमी के जुकाम की दवा पूछने पर डाक्टर ने कहा था कि सर्दी जुकाम की तो कोई दवा नहीं, हाँ यदि तुम्हें निमोनिया हो जाय तो उसकी अचूक दवा मेरे पास है।

बस, वह बिगड़ गई— कैसी झका मुँह से निकालते हैं। यह तो अपने बच्चे के लिये है। बच्चे का ध्यान नहीं रखा जाता तो चुप ही रहें। बच्चा तो फौरन प्यार करने वाले को पहिचान जाता है। तभी तो मुन्नी तुम्हारे पास जाने से घबराती है। अच्छा, तुम दावत में हो आओ, मैं डाक्टर के जाती हूँ।

मैंने बुझे मन से कहा— अच्छा।

"देखा, कैसी जल्दी अच्छा कह दिया। मैंने झूठ तो कहा नहीं कि इन्हें मुन्नी की क्या चिन्ता! चिन्ता होती तो कहते, पार्टी गई भट्टी भाड़ में, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ। जाओ जी, तुम तो दोस्तों के साथ हा-हू कर आओ।"

नतीजा यह हुआ कि डाक्टर के वह अकेली ही गई और मै कपड़े बदल कर आसन पाटी लेकर पड़ गया।

वह एक घण्टे बाद लौटी तो बगल में तीन चार टॉनिक दबा रखे थे। रोकते रोकते भी मेरे मुंह से निकल पड़ा— पैसे बिगाड़ने थे सो बिगाड़ आई।

बस, गोलाबारी शुरु हो गई। मैंने भागकर शौचालय का आश्रय लिया। पूरे आध घण्टे बाद लौटा तो भाषण धारा-प्रवाह रूप से जारी था।

उस दिन से मेरी और पत्नी की बोल चाल बन्द हो गई। पड़ौसी पहले कन्नी काट चुके थे। दावत में शामिल न होने पर दोस्त नाराज़ थे। अजीब साँसत और आफत में जान थी।

पर पिता बनने पर मैं भी भगवान का पैगम्बर बन गया था। मुझे भी बुद्धि-लहर आई। मुन्नी को उत्पन्न हुए साल बीतने चला था। मैंने सोचा कि वर्षगांठ बड़ी धूमधाम से मनाई जाय जिससे पत्नी को पता चल जाय कि मैं मुन्नी का कितना ध्यान रखता हूँ, जिससे पड़ौसियों को पता चल जाय कि मैं यह ही नहीं जानता कि लड़का हुआ या लड़की, बल्कि उसका नाम भी रख दिया है, जिससे मित्रों को पता चल जाय कि खाने खिलाने के समय मैं उन्हें नहीं भूलता।

दावत का दिन आ गया। पत्नी प्रसन्न थी। खुशी खुशी काम कर रही थी। पड़ौसी मेरे घर आकर दुनिया भर के पापड़ बेल रहे थे। मित्र मग्न थे, भोजन से पहले विनोद कर जीभें पैना रहे थे। और जिसने यह

सब तूफान उठाया था वह अन्दर के कमरे में शान्ति से सो रही थी।

अरुण ने कहा— यह झाड़ी फिर उगाली पिता जी! इस बार इन्हें ७ के अंक के अनुसार काटो। मानो भाभीजी मान किये पड़ी हों, या मुन्नी टांग उठा उठाकर खेल रही हो, या ......।

तभी मुन्नी के रोने का स्वर मेरे कानों में पड़ा। पत्नी रसोई में व्यस्त थी। मैं मित्रों से क्षमा मांग अन्दर गया। गरदने पर दूध रखा था। हीटर का प्लग लगाया। दूध गरम किया। तीन चौथाई बोतल में भरा। एक चौथाई भूमि पर बिखेरा। फिर गिलास में करा। चीनी डाली। चम्मच से हिलाया। दुबारा बोतल भरी। मुन्नी के पास गया। वह मुझे देखकर ज़ोर से रोने लगी।

मन ने कहा, भाग चलो। परन्तु मेरी परीक्षा का दिन था। मन मारा। मुन्नी को गोद में लिया। वह एक बार चुप हुई। फिर रोने लगी। बोतल मुंह में लगाई। चुप होकर पीने लगी।

मुन्नी का हाथ उठा। मेरी मूछें पकड़ लीं। फिर बोतल समाप्त करने तक नहीं छोड़ी। आज की विजय पर वह मेरी मूछ मरोड़ रही थी।

दूध निमटने पर मुन्नी को खाट पर लिटा मैं द्वार की ओर मुड़ा तो देखा लगभग सारी पार्टी जमा थी। उनकी अगुआ मेरी पत्नी थी। उसने गाना आरम्भ किया और अफ्रीका का जंगली नृत्य होने लगा। सब नाचने, कूदने, चिल्लाने लगे।

बेचारी मेरी ज़रा सी मुन्नी। अक्ल में हम दोनों की प्रतिरूप, शक्ल में हम दोनों की प्रतिरूप। डर कर उठ बैठी और मुझसे चिपट गई।

मैंने चिल्ला कर कहा— बाप बेटी को शान्ति से नहीं रहने देते। मैं आ तो रहा था वहीं। सब के सब यहीं आ धमके। चलो भागो, मैं अभी

आता हूँ। मुन्नी अधसोई थी। शोर मचा कर उसे जगा दिया। अब पता नहीं सोयगी या नहीं। एडलर, जुंग सब ने कहा है कि बच्चे को डराना नहीं चाहिये। उसमें कॉम्प्लैक्स हो जाते हैं। अभी नहीं पता चलेगा। बड़े होने पर ......"

———

पिताजी ने सख़्ती से काम लिया

(मध्यवर्गीय परिवार का कमरा। एक मेज़ और दो कुरसी। कोने में अलमारी। बस। मेज़ पर कई काग़ज़ों को छांटने में पिताजी व्यस्त हैं। वे घर का हिसाब देख रहे हैं। एक बिल उठाते ही वे क्रोध में लाल हो जाते हैं।)

पिताजी—हे भगवान्!

(बेटा कमरे में घुस रहा है। पर पिताजी की एक झलक देख कर बाहर टहल जाता है।)

पिताजी— अमिता! अमिता!

(उन्होंने अंगूठे और उंगली से बिल को ऐसे पकड़ रखा है जैसे किसी कानखजूरे को पकड़ रखा हो। सीढ़ी से उतरने की ध्वनि आती है और अम्मा कमरे में प्रवेश करती हैं।)

अम्मा— क्या है जी? क्या बात है?

पिताजी— क्या बात है! बात क्या होती! मेरा सिर!

अम्मा— आख़िर कुछ बताओगे भी?

पिताजी— बताने से लाभ क्या है? तुम मेरी बात सुनती कब हो!

(अम्मा मुस्कराने लगती हैं।)

पिताजी— **(बिगड़कर)** मेरे ऊपर हँस रही हो! और हँस लो! पर मैं तुम्हारे इस बिल का भुगतान नहीं करूंगा।

अम्मा—**(घबरा कर)** क्यों, क्या बात है? देखूँ कौन सा बिल है। **(बिल झपट लेती हैं।)**

पिताजी— तुम चाहे कुछ भी कहो······

अम्मा— (**बात काट कर**) पूरे चार महीने ग्यारह दिन बाद मैंने पाउडर और स्नो खरीदा है। और वह भी जब क्लियरैन्स सेल हो रही थी।

पिताजी— मैं पाउडर और स्नो को कब कह रहा हूँ। मेरा मतलब तो दुकान से है।

अम्मा— दुकान में क्या ख़राबी है? सदर की सबसे बड़ी दुकान है। सब माल ताज़ा तथा असली रखती है।

पिताजी— यही तो तुम्हारे अन्दर सबसे बड़ी ख़राबी है। मेरे कहे को तो यह समझती हो जैसे कोई पागल भौंक रहा हो।

अम्मा— आख़िर कुछ कहोगे भी!

पिताजी— यह वही दुकान है जिसने मुझे एक दिन राह चलते रोक लिया था।

अम्मा— तो?

पिताजी— तो तो मत करो, मैं सब सुना रहा हूँ। मैं अपने भावी बॉस से मिलने जा रहा था। रास्ते में दुकान पड़ी। मेरी दृष्टि इसकी ओर गई तो इसके मालिक ने बड़े जान पहचान वालों की तरह मुझ से नमस्ते की और मुझे अन्दर बुलाया।

अम्मा— इसमें भी उस बेचारे ने कुछ कसूर कर दिया?

पिताजी— (**चीख़ कर**) अमिता, बीच में अपनी टांग मत अड़ाओ। जो कुछ मैं कहता हूँ उसे शान्ति से सुन लो। मैं अपने दिमाग़ पर ज़ोर डालता हुआ कि यह कौन सा मित्र पैदा हो गया, दुकान के अन्दर गया। अन्दर लच्छेदार बातों के बीच उसने मुझे बताया कि लाहौर में सारा माल मैं उसकी दुकान से लेता था। मैंने कहा मेरा बाप भी कभी लाहौर नहीं गया था। फिर तो उसने क्षमा मांगने में दो मिनट लिये और आगे के लिये मित्रता जोड़ने में दस मिनट।

अम्मा— फिर कहोगे बीच में बोलने लगी। पर उसने बुरा क्या किया? आदमी को सब जगह अपने मित्र बनाकर रखने चाहियें। क्या पता किस दिन काम आ जायँ।

पिताजी— (**बात अनसुनी कर**) इसी बीच दूसरा उम्मीदवार बॉस से पहले मिल लिया था। और नौकरी के साथ वह बॉस भी मुझसे छिन गया।

अम्मा— अच्छा। अब से मैं यह बात ध्यान में रखूंगी।

पिताजी— (**मेज पर मुट्ठी मार कर**) क्या ख़ाक ध्यान में रखोगी! उसी दिन लौट कर तुमको चेतावनी दे दी थी कि उस दुकान से कोई वास्ता मत रखना।

अम्मा— मैं भूल गई थी।

पिताजी— खूब! तुमने तो कह दिया कि मैं भूल गई थी। और यहाँ सारी इज़्ज़त उतर गई। वह भी अपनी ही आँखों में। तुमसे और क्या आशा हो सकती थी!

अम्मा— (**बात पलटकर**) सच सच बताऊं?

पिताजी— हाँ।

अम्मा— यदि मैं कहूं कि मैं भी तुम्हारी तरह फंस गई थी?

पिताजी— (**समवेदना से**) हैं ······ तो कोई बात नहीं। (**विश्वस्त स्वर में**) एक बात है अमिता।

अम्मा— क्या?

पिताजी— है पूरा व्यापारी। मेरा कहना याद रखना। एक दिन वह सब दुकानों को ठप करके रख देगा।

अम्मा— कर क्या देगा, उसके सामने चलती किसकी है।

(अम्मा कहते कहते लौटने लगती हैं।)

पिताजी— एक मिनट और।

अम्मा— फिर कभी। सरला बैठी है।

पिताजी — ज़रा सी देर का काम है।

अम्मा— वह जाने वाली है। फिर आ जाऊंगी।

पिताजी— सरला गई भट्टी भाड़ में, तुम यहां बैठो। (**अम्मा मुंह बनाती हुई बैठ जाती है**।) मैंने तुमसे कहा था कि घर को सुचारु रूप से चलाने के लिये रुपये को हिसाब से खर्च करना चाहिये। जीवन को सुखी बनाना है तो रुपये को व्यय करना सीखो।

अम्मा— ठीक ठीक। (**उठने लगती हैं**।)

पिताजी— (**हाथ पकड़ कर बैठाते हुए**) मैंने माह के आरम्भ में तुम्हें चायदानी लेने के लिये पांच रुपये का नोट दिया था।

अम्मा— हाँ दिया था, क्योंकि तुमने पिछले महीने चायदानी फोड़ दी थी।

पिताजी— मैं यह कब पूछ रहा हूँ!

अम्मा— पर तुम्हें फोड़नी नहीं चाहिये थी। चाय तो जैसी रोज़ बनती है वैसी उस दिन बनी थी।

पिताजी— कौन कहता है! बिल्कुल टारटरिक एसिड हुई पड़ी थी।

अम्मा— चलो मान लिया, फिर भी? वह अंग्रेज़ी चायदानी थी। फिर विवाह की भेंट। आजकल वैसी मिलती कहां हैं? पूरे महीने ढूंढी पर मिली ही नहीं। मिलती थी तो पन्द्रह बीस की।

पिताजी — अच्छा।

अम्मा— हां, दुकानदार कह रहा था कि सरकार ने डयूटी बहुत बढ़ा दी है। इन आदमियों की सरकार का क्या, मुसीबत तो हम नारियों

को उठानी पड़ती है।

पिताजी— अमिता, तुम मूर्खों जैसी बातें न करो। आयात कर अपने देश के निर्धनों को बचाने के लिये लगाये जाते हैं।

अम्मा— **(हँस कर)** यह तो सब सरकारों के चोंचले हैं। चाहे वह तानाशाही हो या समाजवादी।

पिताजी— **(झुंझला कर)** तुम मेरी बात क्यों नहीं समझती ? इस बिल में चार रुपये की चायदानी भी लिखी है।

अम्मा हां, बेचारे ने बड़ी कठिनाई से उसी डिज़ाइन की देसी चायदानी मंगाकर दी है। **(ज़ोर देकर)** सुनो जी।

पिताजी— **(अचकचाकर)** क्या ?

अम्मा— तुमने बजट में पांच रुपये चायदानी के लिये दिये थे ?

पिताजी— हां।

अम्मा— और मैं चार रुपये में लाई हूँ ! एक रुपया तुम्हारे ऊपर उधार रहा।

पिताजी— और वे पांच रुपये जो मैंने तुम्हें दिये थे ?

अम्मा— अब याद धरे हैं। **(सोचते हुए)** याद करती हूँ। हाँ, ध्यान आया। मैंने उसके नाइलन के ब्लाउज़-पीस ले लिये थे।

पिताजी— यह कब तय हुआ था ?

अम्मा— लो, इसमें तय की क्या बात है। तुम्हारा बस चले तो मुझे नंगी बूची फिराओ।

पिताजी— **(वार से घबराकर हँसी में उड़ाने का प्रयास करते हैं)** नाइलन पहन कर और नंगे फिरने में क्या अन्तर पड़ेगा।

अम्मा— हाँ हाँ, मेरा उल्लू बना लो। वही सड़े गले माँ के घर के कपड़े

पहने जाऊं। साढ़े चार रुपये का कपड़ा ले लिया तो इनका दिवाला खिसक लिया।

पिताजी— अच्छा, आठ आने तो बचे ?

अम्मा— मैंने साड़ी धुलवाई थी उसका एक रुपया दिया था। आठ आने ये रहे, पूरा डेढ़ रुपया हो गया।

पिताजी — पर यह आठ आने दिये कहाँ से होंगे ? **(मुस्कराते हैं।)**

अम्मा— **(बिगड़ कर)** क्यों, क्या मेरे पास रुपये नहीं है ? क्या मेरे घरवाले भूखे हैं ? क्या मेरे भाई राखी और भैयादोयज पर मुझे रुपये नहीं देते ?

पिताजी— नहीं, नहीं, यह तो ठीक है। पर मेरा मतलब केवल इतना था कि तुम्हें संभल कर ख़र्च करना चाहिये।

अम्मा— संभल कर ! और शीला कहती थी कि अभी भी संभल कर खर्च किया तो जी क्या बुढ़ापे में भरोगे।

पिताजी— तुम मेरे सामने शीला का नाम न लिया करो।

अम्मा— कहती थी यही दिन तो खाने पहनने के हैं।

पिताजी— मैं शीला से उपदेश सुनना नहीं चाहता।

अम्मा— मैं तो सोचती थी शीला तुम्हें बहुत अच्छी लगती है। उसके साथ कैसे घुलकर बातें करते हो।

पिताजी—**(क्रोध में चीख़कर)** कौन बेवक़ूफ़ कहता है ?

अम्मा— **(बिगड़कर)** हाँ, वह मेरी ममेरी बहन है, तुम क्यों उससे बातें करोगे ? **(आँख में आँसू भर लाती हैं)** मैं नहीं जानती तुम मुझसे चाहते क्या हो। दिन भर घर का काम संभालती हूँ, सीढ़ियों पर पैर तुड़ाती हूँ। तुम्हारा क्या। मौज करते ... ...

पिताजी— अमिता !

अम्मा— तुम्हारे लाट साहब के सौ नख़रे उठाती हूँ तो तुम्हारे पूरे हज़ार। रसोई में अलग मरना ······ **(कुर्सी से उठ जाती हैं)**

पिताजी— **(साथ साथ कुर्सी से उठ जाते हैं)** यह बिल जल्दी दे देना चाहिये। किसी का उधार क्यों सिर पर रखा। मुझे आज ही तनखा मिली है।

अम्मा— फिर भी मैं इनका कितना ध्यान रखती हूँ। **(सुबकी लेकर)** मैं इनका एक रुपया बचाऊँ और वह भी मुझे न मिले। मैं भाई का दिया ख़र्च करूँ, वह भी मेरा नहीं।

पिताजी— हाँ, तुम अपना डेढ़ रुपया भी अभी ले लो। बाज़ार से लौट कर कभी मैं भूल जाऊं। **(खिसियानी हँसी हँस कर)** बात यह है भूलने की आदत मुझ में बचपन से है। **(जेब में हाथ डाल कर एक रुपये का नोट निकालते हैं और रेजगारी गिनते हैं।)**

अम्मा— **(पिघल जाती हैं)** मैं बहुत बुरी हूं, क्या करूं। आगे अच्छा बनने का प्रयत्न करूंगी। **(हाथ फैला देती हैं)**

(अम्मा विजय-गर्व की चाल से बाहर चली जाती हैं। पिताजी थके से फिर कुर्सी पर बैठ जाते हैं। बेटा 'सब साफ़' का सिगनल देखकर अन्दर आता है।)

बेटा— पिताजी, मुझे आठ आने दे दो। मैं पतंग उड़ाने की रील लाऊँगा।

पिताजी— नहीं बेटा, मुझे तुम्हारे साथ भी सख्ती से काम लेना पड़ेगा। पैसे उड़ाना आसान है कमाना मुश्किल। इस घर में मेरा कहा चलेगा।

———

गुड़िया से टक्कर

मैंने कचहरी से आकर घर में क़दम रखा। फौरन पता चला— कि अम्मा और पत्नी ज़रा-सी-देर-के-लिये-बाज़ार-हो-आयें की पांच घण्टे की यात्रा पर जाने वाली हैं; कि गुड़िया सो रही है; कि सोते रहने के कारण वह साथ नहीं ले जाई जा सकती; कि मुझे उसकी देख भाल रखनी है; कि अभी वह कम से कम एक घण्टे और नहीं उठेगी। मैं मानता हूँ कि मैं बड़ी बड़ी ग़लतियां कर जाता हूँ। मैंने हामी भर ली और वे अपनी खोज की यात्रा पर निकल गईं।

आज तक मैंने बड़ा आच्छादित जीवन बिताया है। सिवाय इसके कि एक बार कूदते हुए टांग की हड्डी तुड़ा बैठा था। सिवाय इसके कि मेरे कारण एक बार ट्रेनें लड़ गई थीं। सिवाय इसके कि कॉलिज में एक बार आंख टकराने की भी दुर्घटना हो गई थी। दस बीस और मुझे याद नहीं आ रहीं। बाकी सारा मेरा जीवन शान्ति से बीता है।

गुड़िया केवल एक वर्ष पांच मास दो दिन की है। उस दिन मैंने जाना कि भगवान लड़कियों को बचपन से ही अधिक बुद्धिशालिनी बनाता है। मेरी अम्मा और गुड़िया की अम्मा घर से बाहर निकलीं और गुड़िया ने अपने दोनों लैम्प जला लिये मानो वह उनके जाने की ही बाट देख रही हो।

उसने जगने का सिगनल दिया और कोटरूपी यात्री का एक पहुँचा हाथ में चढ़ा रहने पर भी ट्रेन उस ओर भाग ली।

मुझे अपने पांयते खड़ा देख कर वह बहुत प्रसन्न हुई। एक किलकारी मार कर वह मेरे ऊपर चढ़ने लगी। हाथ उसके नीचे लगाते ही मुझे गोला लगा और बिलबिला कर मैंने उसे नीचे धकेल दिया। भाग्य की बात, मैं किनारे पर खड़ा था। मेरा धक्का खा कर वह अपना संतुलन

नहीं संभाल सकी और नीचे कलाबाज़ी खाती जाने लगी। इतना सा कैच न ले सकता तो मेरे दसों साल से क्रिकेट खेलने का लाभ क्या होता! शोक यह है कि नीचे झुकने के झटके में मेरे कोट की सींवन उधड़ गई।

ज़मीन से ऊपर ही ऊपर बिना हाथ टेके मैंने गुड़िया को लपक लिया। उसके हाथ हवा में फैले हुए थे, सो एक में मेरी टाई आ गई। मानों फांसी के नीचे से तख्ता हट गया हो। मेरा सारा मुख सुर्ख़ हो उठा। धम से खाट पर बैठ गया। गुड़िया को उसकी गद्दी पर पटक दिया। एक हाथ से टाई ढीली करके निकाली और दूसरे से कोट को उतर जाने दिया। इतनी दुर्घटनाएँ होने पर भी गुड़िया नहीं घबराई, खिलखिलाने लगी। अवश्य उसे टमाटर जैसा लाल रंग बहुत पसन्द है, चाहे वह मुख का हो।

बीच बाज़ार में इज़्ज़त लुटे व्यक्ति के स्वर में मैं बड़बड़ाया—अच्छा गुड़ियाजी, अब मज़ाक़ काफी हो लिया। झटपट कपड़े बदल डालो, नहीं तो ठण्ड लग जायगी। मैंने उसका लंगोट उतारना शुरु किया। जन्म लेने के बाद पहली बार आज पिताजी को अपने से लाड़ करते देखकर वह फूली नहीं समा रही थी। हाथ पैर फटकार रही थी। उधर गांठ गीली होकर कस गई थी या हाथ से फिसल फिसल जा रही थी। और मैं अनाड़ी आदमी था। ख़ैर, मैं अपने अभियान में असफल रहा। झुंझला कर मैंने उसे झटका दिया तो वह और कस कई। आख़िर मैंने उसे वैसे ही पैरों में से उतारना आरम्भ कर दिया। यह तो मानना पड़ेगा कि इसमें मुझे कुछ तकलीफ हुई और मुझसे अधिक गुड़िया को हुई, पर लंगोट उतर गया।

उसके ऊपर के कपड़े भी गीले थे। असली मुहिम तो अब सामने थी। उतारने को तो मैंने किसी तरह वे कपड़े उतार दिये। फिर नये ढूंढ कर लाया। गुड़िया मुझे चतुर्मुखी दिखाई दे रही थी, उसके हाथ इतनी तेज़ी से चल रहे थे। मैं एक बांह पकड़ता था तो दूसरी चलने लगती थी, दोनों को साथ पकड़ता तो कमीज़ किस चीज़ से पहनाता। आख़िर मैंने उसकी

दोनों बाहें अपने गोडों में दबा लीं। पर जैसे ही पहनाने चला वैसे ही वे फिर छूट गईं। अन्त में क्रोधित होकर मैंने उसके एक चाँटा मार दिया। वह चाँटा खाकर सहमी और उस क्षण का मैंने पूरा लाभ उठाया।

चाँटा खाने के बाद वह बिल्कुल चुप हो गई। स्वेटर पहनने में और लंगोट बंधाने में उसने कुछ गड़बड़ नहीं की। मैं घबरा उठा। जब तक वह हाथ पैर फड़फड़ा रही थी तब तक गुड़िया थी। किन्तु अब? शायद मैंने उसके ज़ोर के मार दिया। पर वह तो रो भी नहीं रही। क्या कहीं अन्दरूनी चोट पहुँची है?

मैं व्यथित हो उसकी ओर देख रहा था। तभी एक आवाज़ के साथ उसने पिचकारी मारी। उधर बाहर से दिनेश के पुकारने की आवाज़ आई। जब दिनेश अन्दर घुसा मैं गुड़िया के पैर पकड़े शी-ी-ी कर रहा था। ये दोस्त! भगवान' इनसे समझे। काश मेरे नाखून होते। हँस कर 'भाभी जी नहीं हैं' इतना कह वह पीठ दिखा गया।

पांच मिनट तक उसे सुसकार कर मैंने लंगोट खोला। अपने हाथ दो जगह से सान लिये। खुजाहट मिटाने को नाक की चोटी पर टीका लगा लिया। धोते समय उसके ऊपरी कपड़े फिर गीले कर दिये।

निमट कर उसने अपना अपमान याद रखा और रोने का पिटारा खोल दिया। मैंने उसे चुप कराने की हर कोशिश की, सब बेकार। मुँह बनाकर उसके सामने किया तो उसने ऐसा हिट मारा कि मेरा चश्मा नाक से उतर कर बाउण्ड्री के पास पहुँच गया।

मैं भागा। चश्मा ढूँढ़ कर पूर्ववत् रखा। सहायता के लिये दो तीन खिलौने बुलाये। एक गुड़िया के हाथ में दिया। वह उसके हाथ से भीमसेन की गदा की तरह छूटकर मेरे कान का निचला भाग सुन्न कर गया।

रोने से घबरा कर मैंने अपने कान बन्द किये। परन्तु रोना फिर भी

सुनाई दे रहा था। तब मैंने अपना हाथ उसके मुँह पर रखना चाहा। वह मेरा वार बचा गई। गड़बड़ में मेरी उंगली उसके मुँह के अन्दर चली गई और साढ़े चार लोहों ने उसे दाग़ दिया।

उसका रोना न सुनने का बस अब एक ही उपाय था— मैं उससे अधिक ज़ोर से रोने चीख़ने लगूँ।

जस्टिस रामकृष्ण बुद्धा ने कहा है कि आदमी अपने जीवन में हर समय नई बात सीखता रहता है। मैंने भी उस दिन सीखा कि भारत में चमत्कारों का युग अभी बीता नहीं है। पूरे सत्तावन मिनट दस सेकिण्ड में खोजी अपने घर पर थे।

दोनों की अम्माओं ने आकर देखा कि दोनों रो रहे हैं। जल्दी आने का कारण पता चला कि दिनेश ने ख़बर पहुँचा दी थी। भगवान ऐसा दोस्त जुग जुग दे।

टक्कर के अन्त में गुड़िया की बड़ी लल्लो चप्पो करके मनाया गया। और मुझे— मेरे तो सिर पड़े रहते हैं कि बच्चों को मनोवैज्ञानिक तरीक़े से पालना चाहिये। आज पांच मिनट को चली गई तो लालाजी को पता चल गया। हाय हाय बेचारी के कैसा थप्पड़ मारा है, सारी उंगलियां उपड़ आई हैं! — कह कर बिलखा दिया गया।

———

बात यह है कि

"आइये बाबूजी, पिताजी और माताजी तो प्रसन्न हैं?" वे हमेशा की तरह काउन्टर के पीछे खड़े थे, दुकान के अन्दर के भाग में। बीस वर्ष से मैं उन्हें वहाँ खड़ा देखता था। उनके गले में खुला फीता पड़ा था। मुख पर स्वागत की मुस्कान थी। दुकान में आने जाने वाले हर व्यक्ति की अभ्यर्थना के लिए वे तत्पर थे।

डर के मारे पैर आगे पड़ने पर भी मेरा मन पीछे की ओर भाग रहा था। काउन्टर के पास आकर मैं सौ गज़ की दौड़ लगाने वाले की भांति अपने पंजों पर खड़ा था।

"कहिये सर्ज दिखाऊँ या कोई ट्वीड लीजियेगा?"

मेरे बचपन से जब मैं गज़ गज़ भर की सिनक लटकाये फिरता था, वे मेरे कपड़े सी रहे थे। तथा जानते थे कि इन दोनों माध्यमों में ही हम दोनों के बीच व्यापार चलता था।

मैं हकलाते हुये बोला, "देखिये ......

"हाँ, सर्ज लीजिये। मैं भी कैसा मूर्ख हूँ, इतने दिन से आपके कपड़े सी रहा हूँ फिर भी ध्यान नहीं रहता कि आप सर्ज का सूट बहुत अधिक पसन्द करते हैं।" मुझे बोलने का अवसर न देकर वे एक सांस में कह गये। "विलायत से बहुत बढ़िया आई हैं। वैसे तो मैं देसी भी रखता हूँ पर अपने हमेशा के गाहक को ऐसा वैसा कपड़ा दिखाने से क्या लाभ! न उनमें रंग है न कपड़ा, इसके आगे तो पानी भरें। ...... शायद गहरे काहिये रंग की आपको पसन्द आये।" नत्थू मास्टर ने यह बात इस उत्साह के साथ कही मानो गहरे काहिये रंग की उपयुक्तता का विचार उनके मस्तिष्क में मुझे देखकर ही जनमा हो तथा इसके लिये वे

मेरे बड़े कृतज्ञ हों।

अपने सहकारी की ओर मुड़कर वे बोले, "बाबूलाल, ज़रा सीढ़ी लगाकर कुछ काहिये रंग की सर्जें उतार देना।"

सर्जें उतर कर सामने आ गईं। क्या षोडशी के समान नाज़ुक कपड़ा था, किसी स्मितवदना की कटाक्षभरी मुस्कान के वार कर रहा था, रंग उर्दू के शायर के 'गन्दुमी रंग भी है ......' की याद दिला रहा था, फिर भी मेरा मुर्ग़-दिल पता नहीं क्या जुलाब लेकर आया था जो बद-ज़ायका हो रहा था।

नत्थू मास्टर की प्यार भरी अंगुलियाँ उसमें चलने लगीं। हठात् कहिये या यह कहिये कि कपड़े ने पारखी के मुख से स्वयं कहलवा दिया, उनके मुख से निकल पड़ा, "कितना सुन्दर रंग है! बाबूजी, इसका सूट कितना खिलेगा!" लाखों सीपी टटोलने के उपरान्त एक नायाब मोती मिलने के समान उनका स्वर था और जैसे वह मोती भी धोखे से या उनके सौभाग्य से या स्वयं मोती की कृपा से उनके हाथ लगा हो।

मैंने कुछ कहने के लिये ओठों को लार से तर किया। पर ग़ज़ब हो गया, उन्होंने समझा कि कपड़े के रूप पर मेरी लार टपक गई है। उनका हाथ उठा और सर्ज का थान खुल गया। ऐसी आवाज़ हुई कि कोई स्ट्रीम-लाइण्ड कार १९५८ का मॉडल पास से निकल गया हो या फिर कोई स्ट्रीमलाइण्ड बीस वर्ष की चिरयौवना भावनाओं का एक तूफ़ान फैलाती चली गई हो।

मुझे उस समय दुनिया भर के वैज्ञानिकों पर बड़ा क्रोध आ रहा था कि भला सोचो इन मूर्खों ने सब प्रकार के आविष्कार तो कर डाले, यह नहीं हुआ कि एक ऐसी मशीन भी ढूँढ निकालते जिससे मनुष्य एक दूसरे की मन की बात जान लिया करें जिससे इस संसार में किसी के भी

दुखी रहने की तथा भगवान को याद करने की आशा बिल्कुल जाती रहे। फिर प्रोफेसर बिना ज़बानदराज़ी किये लड़के-लड़कियों को कक्षा में पढ़ा दिया करें, फिर बिना बोले सौ युवक एक युवती के प्रति अपना प्रेम जता दिया करें, फिर मेरे जैसे बिनबोले व्यक्ति भी मतदाताओं को उल्लू बना कर प्रधान मन्त्री होने का स्वप्न देख सकें।

वे मेरे पास आ गये और अपने हाथ में पकड़ी सर्ज मेरे कन्धे से लहरा कर बोले, "देखा बाबूजी, कैसा खिलता है आपके। सामने के शीशे में देखिये। एक तो आपकी देह, फिर इसका मनोहर रंग, सोने में सुहागे का काम करेगा।"

कितना कोमल स्पर्श था। हल्की हवा से कोटिंग इठला रही थी। पर मेरे दिल में हिलोर नहीं उठती थी। मैं जानता था कि यह उनका मेरे साथ अकाट्य हथियार है। इसी से बचने के लिए मैं अपने को तैयार कर रहा था। यूरेका, यूरेका, बच निकल भागने की तरकीब निकल आई। "मास्टरजी, इसका सूट अच्छा भी लगेगा। मुझे तो यह केवल कोट के लिये मालूम पड़ता है।"

यह प्रश्न सुनकर उनकी बांछें खिल गई। उनके मन को बड़ा सन्तोष हुआ कि मैं अच्छी तरह देख भाल कर कपड़ा ख़रीद रहा हूँ जिससे मैं आगे किसी से यह न कह सकूँ कि इसे मेरे ऊपर थोपा गया है। नये सिखाड़ी की भांति गोली उचट कर मुझे ही घायल कर गई थी। "नहीं जी, यह सूट के लिये है। कोट के लिये और चीज़ें हैं। दिखाऊं? देखो बाबूलाल, दायें हाथ की अलमारी के तीसरे ......"

मैं उनकी बात काटकर बोला, "रहने दीजिये, कोट का कपड़ा देखकर मैं क्या करूंगा, मुझे तो सूट सिलवाना है।" अलिफ लैला में पढ़ा था कि आफ़त और शामत रूपसी का भेष बदल कर आती हैं।

"आप समझे नहीं, आपको ये कपड़े इसलिये दिखाये जा रहे हैं कि आप इनका अन्तर खुद देख लें। सब में राजा के समान यह कपड़ा चमकेगा।"

बाबूलाल एक अनुभवी सहकारी है, उसने पहले से दुगने कपड़ों का मेज़ पर ढेर कर दिया।

नत्थू मास्टर का हाथ पूर्ववत् मेरे कन्धे को छू रहा था।

हमेशा का दस्तूर चल रहा था।

मैंने उनमें निरर्थक दृष्टि दौड़ाई। मेरा यूनिवर्सिटी में स्थान पाया दिमाग़ किसी युक्ति की खोज में मस्त था जिससे भंवर में फंसे डूबते व्यक्ति को बचाया जा सके।

"क्यों मास्टर जी, यह शोख़ तो नहीं रहेगा?"

पर मेरा दर्जी बनाम बजाज़ जानता है कि मुझे गहरे रंग का कपड़ा अधिक पसन्द है। और उसकी तुरत-बुद्धि के सामने तो सुलेमान भी हार मान सकता है। "इसका सा सूफियाना रंग तो दुकान में लगे किसी भी कपड़े का शायद ही हो। क्या मैं आपको शोख़ कपड़ा दिखा सकता हूँ। मैं आपकी पसन्द को जानता हूँ। मैं आपके कपड़े उस समय से सी रहा हूँ जब आप केवल दो वर्ष के थे।" उनके स्वर में कुछ झोंक का पुट था जो कह रहा था कि देखो मैं जानता हूँ कि तुम यह कपड़ा लोगे और सवाल जवाब भी काफी हो लिये हैं और तुम्हारी पसन्द को मैं तुम से अधिक अच्छी तरह जानता हूँ और अन्त में क्या तुम मुझे बुद्धू समझते हो।

यह गीदड़-भभकी या बन्दर-घुड़की नहीं थी बल्कि किसी महान जनरल का सधा हुआ स्वर था जो बचपन से मेरे ऊपर बॉस कर रहा था।

मैं चुप हो अपने साहस के टुकड़े बटोर रहा था।

हाथ नीचे आया। सर्ज एक झटके में काउन्टर पर सुर्ख़ गठरी में परिवर्तित हो गई।

उन्होंने फीता गले में से निकाला तथा मेरा सीना नापने लगे। मेरा पूरा नाप उनके पास था। फिर भी वे हर बार मेरे सीने का नाप लेते थे। "बाबूलाल लिखो, सीने पर एक इंच बढ़ा हुआ। देखो याद रहे, छोटा न हो जाय।"

"बाप रे, आपके हाथ, क्या भुलाये जा सकते हैं! गीता में ठीक लिखा है कि भाग्यशालियों के हाथ बड़े लम्बे होते हैं।"

अनजाने ही मुस्कान ने आकर मेरे साहस की लड़ी पिरो दी।

"बाबूजी, अगले सोमवार को यह आपके पास पहुँच जायगा। बाबूलाल, लिखो २१ तारीख, फिर कभी भूल जाओ।"

बाबूलाल ने बाबा आदम के ज़माने की कापी में दोनों चीज़ें लिख लीं।

एक लाइफ-बैल्ट हाथ लगी। "मास्टरजी, इसके दाम क्या हैं?"

किन्तु यह मरुसागर की बजाय वारिधि की मृगमरीचिका थी। मास्टरजी ने मुख बनाया मानो मैंने उन्हें गाली देकर गन्दा रिश्ता क़ायम करने की कोशिश की हो। "आप कैसी बातें करके मुझे भी शरमिन्दा करते हैं। पैसे अपने घर में हैं। पहले सूट पहन कर हमारा दिल खुश करिये।"

अब मास्टर साहब को हमारा दुकान में खड़ा रहना भी बुरा लगने लगा था। वे मेरा हाथ पकड़ कर बाहर की ओर आने लगे।

दर्द का एक हद से गुज़र जाना उसके लिये दवाई का काम करता है। मुझे अब भंवर में अपनी माँ की गोद की हिलोर का मज़ा आ रहा

था। मास्टरजी अब कहेंगे— कैसा सुहाना समय हो रहा है। और बाबूजी इस बार पिताजी को भी लाइये। उनका कोट सिये बहुत दिन हो गये हैं। पैसे पूछना बेकार है। वे मेरे से पैसे तब तक नहीं लेते जब तक कि उनकी दुकान पर कोई माल न आया हो और उन्हें उसकी बिल्टी छुड़ाने को पैसे की ज़रूरत न हो।

"और बाबूजी? कमीज़ का कोई कपड़ा दिखाऊं?"

मेरी विचार-धारा में व्याघात पहुँचा। यह भी उनका पेटेण्ट सवाल था जिसका उत्तर भी मैंने 'नहीं' में पेटेण्ट करा रखा था।

दुकान से निकलने पर कोई मेरा ताप लेता तो पता चलता कि इसके लिये उसे मौसम नापने का थर्मामीटर काम में लेना पड़ेगा।

बात यह है कि मेरे बाप के बहनोई के बेटे का ब्याह था। और उसके बाद देखिये हमारा वास्ता आल इण्डिया बुद्धि कम्पटीशन के माहिरां से कैसा पड़ा! उस बेटे के ससुरे को क्या सूझी कि हमें दहेज़ में एक सूट का कपड़ा दे दिया। यह मुझे क्या उसके दामाद को भी बुरा लगा। लोग बेकार में दिखावे का काम करते हैं। इतने रुपये नक़द या कुछ चीज़ लेकर वह अपनी लड़की के पति को दे देता तो घर में ही रहता।

फिर कपड़ा आते ही हमें चिन्ता चढ़ी कि किस तरह इसका रूप बदला जाय। वैसे तो मैं सभा सोसायटियों से बहुत डरता हूँ किन्तु उस दिन यह जी कर रहा था कि सड़क के हर मोड़ पर दवा बेचने वालों की तरह मीटिंग कर कर के अपनी आवाज़ दहेज़ में बिना सिला सूट देने वालों के विरुद्ध उठाऊं। भला हो मेरी गृहिणी का— अपनी मां के पिता की ओर से मिले रुपयां में से बीस रुपये लाकर मेरे सामने रख दिये।

तदलम्। मैं मास्टर की ओर चल दिया। पर उस मास्टर के बच्चे बुद्धिविशारद तर्कालंकार को तो देखो, साला बचपन से मेरी प्रकृति जानने

का दम भरता है। यह नहीं पहचान सका कि इस समय मैं सूट का कपड़ा लेने नहीं आया बल्कि मुफ्त का कपड़ा सिलवाने आया हूँ।

और मैं बचपन का वचन भूल कर सब को जी भर कर गाली दे रहा था।

खोदा पहाड़ निकला एवरेस्ट

"बाबूजी, चिट्ठी है।"

मेरे मन में कहानी लिखने के विचार उठ रहे थे। सोचा, घर में बबली की अम्मा है, चिट्ठी लाकर हमारे तक पहुंचा देगी।

और इस सोचने का फल यह हुआ कि शान्त ज्वालामुखी फिर फूट पड़ा।

एकदम से विस्फोट हुआ— "लो जी, अपनी यारनी की चिट्ठी।"

मैं पॉम्पाई-निवासी की भाँति एकबारगी सकते में रह गया। फिर लिफाफा उलट पुलट कर देखने लगा।

बड़ा सुन्दर लिफाफा था, और उस पर मोती से अक्षरों में इज़ानिब का पता टंका था।

पर उसने यह कहाँ लिखा था कि उसे किसी मेरी यारनी ने भेजा था? क्या लिफाफा देखते ही भांप लेते मजमूं चिट्ठी का?

मैंने प्रश्नसूचक दृष्टि से स्त्री की ओर देखा।

इसी सोच विचार में मैंने विसूवियस की तलहटी से भाग निकलने का अवसर खो दिया था।

लावा बरस पड़ा— "हाँ, उसे उलट पुलट कर क्या देख रहे हो। यह तो मैं जानती हूँ कि आप मेरे सामने इसे नहीं खोलेंगे। मौहर तो देखो, बम्बई से आया है। इन्हें भी गुलछर्रे उड़ाने के लिये बम्बई बुलाया होगा।"

स्त्री की निरीक्षण शक्ति से प्रभावित हो मैंने प्रशंसा की दृष्टि से उसे देखा। पर आखिरी वाक्य से मुझे निहायत असंतोष हुआ। मैंने ऐसी

कोई बन्दूक देखनी तो दूर रही सुनी भी नहीं जिसमें से फूलों के छर्रे निकलते हों, फिर यह कहाँ का न्याय है हमें ही गुलछर्रे उड़ाने की बन्दूक बना दिया जाय।

विरोध करने के लिये मैंने मुख खोला था कि स्त्री ने फिर बन्द कर दिया, "हाँ, हाँ, कहोगे कि किसी दोस्त ने भेजी है। पर बम्बई में तुम क्या, तुम्हारा बाप भी गया था जो वहाँ तुम्हारा दोस्त हो।"

अब मुझ से नहीं रहा गया, "क्या वाही तवाही बक रही हो। नाहक तोहमत न लगाया करो। यह तो गाली देने के समान हुआ कि कोई पैसे खर्च करके बम्बई जाय और दूसरा कहे कि तुम तो मोहीउद्दीनपुर तक भी नहीं गये हो। अगर और कोई कहता तो उस पर मानहानि का मुकदमा चला देता। ······ देखो, आगे के लिये फिर तुम्हें याद दिला रहा हूँ। मेरे पिताजी इंग्लैण्ड जाते समय बम्बई में दो दिन तीन घण्टे ठहरे थे और मैं १९४५ में बम्बई गया था तथा उस फ्रन्टियर मेल से वापिस लौटा था जिसमें गांधी जी शिमला कान्फ्रेंस के लिये आ रहे थे।"

वह चुपचाप खड़ी मेरा भाषण सुनती रही। फिर बड़ा भोला मुख बनाकर पूछा, "क्यों जी, शशि कौन है?"

वास्तव में पत्र के कोने में शशि भी टंका था।

यह सुनना था कि मेरी उत्कण्ठा भी जाग्रत हुई। लेखक होने के नाते मेरे पास आने वाले प्रशंसकों के पत्रों की कमी नहीं। तभी मेरी स्त्री मेरी डाक सैन्सर किया करती है।

यह शशि कौन है? इसने क्या लिखा होगा?

पत्नी को टालना चाहिये, इसलिये मैंने उनकी स्तुति आरम्भ करदी। "अलेक्ज़ैण्डर, सिकन्दर ने कहा है— जब मैं किसी स्त्री के सामने खड़ा होता हूँ तो ऐसा लगता है कि किसी देवी के सामने खड़ा हूँ। कौनसी ऐसी उँचाई

है जहाँ वह नहीं पहुँच सकती। कौनसी ऐसी गहराई है जहाँ वह नहीं कूद जाती। दिन में वह देवी का एक रूप होती है तो रात में दूसरा।"

मेरी स्तुति पूरी नहीं हुई थी कि उसके हाथ ने डाइव मारा और पत्र हवा में उड़ गया।

ख र र— लिफाफे का कोना फटा।

मैंने कहना जारी रखा, "मैं तो तुम्हारी इस बात की तारीफ करने जा रहा था कि इतना सन्देह के लिये स्थान होने पर भी तुमने खत खोल कर नहीं पढ़ा। तुम सचमुच महान् हो पर ······"

तब तक वह चिट्ठी पढ़ने लगी थी। और मैं निराश होकर निढाल हो कुर्सी के सहारे टिक गया था।

चिट्ठी पढ़कर कुमुद ने कोमल स्वर में पूछा, "क्यों जी, तुम्हारी कहानियाँ बम्बई के पत्र में भी छपती हैं?"

मैं तलहटी में नये बसे गांव के निवासी के समान हर समय मैदान छोड़ कर भागने के लिये तैयार था। "क्यों?"

"तुम्हारा नाम बड़ी दूर दूर तक फैल गया है।"

मैं जान रहा था कि यह सब गरजने की तैयारी थी। कुछ झुंझला कर बोला, "चिट्ठी में क्या लिखा है?"

कुमुद मुस्कराकर बोली, "चिट्ठी आपकी नहीं मेरी है। मेरे मौसाजी के दामाद का लड़का है शशिकान्त! बम्बई में किसी मिल में काम करता है।"

मेरी चढ़ बनी थी। अब मेरी बारी थी। "कहिये श्रीमती जी, आपको देख कर ही किसी ने लिखा होगा— लिफाफा देखते ही भांप लेते मजमूं चिट्ठी का।"

"हटो जी, तुम बड़े वैसे हो। मैं तो मज़ाक कर रही थी।"

"हां जी, तुम तो मज़ाक कर रही थीं और मैं अपने गले में फांसी का फन्दा पड़ा देख रहा था।"

कुमुद ने फौरन बात पलट दी। "शशि का कोई गुजराती मित्र है। वह उत्तर प्रदेश का दौरा करने निकला है। उसने शशि से तुम्हारी बड़ी प्रशंसा की थी और वह सोमवार की शाम को मेरठ में रुक कर तुमसे मिलेगा।"

आज सोमवार था। राष्ट्रीय डाक थी, सो चिट्ठी ने आने में चा दिन लिये थे।

मैंने कमरे में आँख फिराई। एक कोने में फटे कागज़, दूसरे में अखबार का ढेर, तीसरे में अप्रकाशित रचनायें, चौथे में दीमक खाई पुस्तकें।

झल्ला कर बोला— "मिलने आयेंगे। किसने कहा उनसे मिलने को। काम न धाम मियां जी सलाम!'

पर पत्नी का मुख पति को प्राप्त गौरव की प्रभा से प्रकाशमान था। "शशि का दोस्त खोटे कहता है कि मुझे शुद्ध हिन्दी सुनने का बड़ा चाव है। तुम्हारे फूफा जी के मुख से शुद्ध हिन्दी सुनने की कल्पना से मेरा हृदय अभी से हिलोर ले रहा है। मेरठ के प्रसिद्ध महारथी!"

एक के बाद दूसरा कोबाल्ट बम। मेरी शुद्ध लिखने की हिन्दी। मैं तो ठेठ मेरठी बोलता हूँ जिसे विद्वज्जन डाक्टरेट की डिग्री पाने के लिये झूठ मूठ हिन्दी का जन्मस्थान कह देते हैं।

मेरी कल्पना दौड़ी। चित्र खिंचा। खोटे सामने बैठा है। मेरे मुख को घूर रहा है। मानो दांत गिनने की बाट में हो। और मैं मानसिक

तुला पर तोल तोल कर शब्द निकाल रहा हूँ। कहीं सच्चे के साथ साथ कोई जापानी मोती न निकल पड़े।

कुमुद ने आगे पढ़ा— खोटे इलाहाबाद, बनारस भी जायगा। वहाँ की बोली में मिठास है। पर वह शुद्ध हिन्दी नहीं, कुछ देहाती का मिश्रण है।

तीसरा बम। कहीं वह इलाहाबाद में यह न कह दे कि वह शुद्ध हिन्दी सुनने मेरठ अरुण के पास जा रहा है। जितनी पत्रिका मुझे छापती हैं सब बन्द कर देंगी। फिर अरुण कहीं नहीं बिकेगा।

बाकी चिट्ठी मन में पढ़ी जाकर समाप्त हो गई थी। अब गृहदेवी की बारी आई। "चलो उठो, कमरा साफ़ कर दूँ। कितना गन्दा हो रहा है।"

मेरे दोस्त भी कहते हैं। कमरा गन्दा है। पर मेरा कहना है कि नहीं। मेरा कमरा एक प्रयोगशाला है। यह सब कूड़ा मेरे औज़ार हैं। मेरी करीने से सजीं कटिंग्स आदि सब को कूड़ा लगती हैं।

मैंने विरोध किया, "यहां कूड़ा कहां है? सब मेरे काम की चीज़ें हैं।"

"अच्छा, सब काम की चीज़ें सही। मैं इन्हें फेंक कब रही हूँ। उठा कर ऊपर जाने वाले ज़ीने में ढेर कर दूँगी। वहां क्या इन्हें कोई चोर उठा कर ले जा रहा है।"

मेरा क्या कुर्सी का भी हर जोड़ कांप उठा। मेरी प्यारी चीज़ें! जिन्हें अब मैं सूंघ कर बता सकता हूँ कि वे कहां मिलेंगी। उस ज़ीने में जहाँ से रोज़ाना रात को नौ बज कर दस पर एक चितकबरी बिल्ली झूठे बरतन चाटने आती है। उन पर बिल्ली के मुलायम पैर पड़ेंगे। क्या पता लौटते समय वह उनसे अपना मुख भी पोंछती जाय।

तभी फट् की बाहर से आवाज़ आई। कमरे का एक कोना खाली

हो गया था। मैं बाहर भागा। कुमुद को समझाया कि अच्छे पति के नाते मेरा कर्त्तव्य है कि उसे सहायता दूँ। कूड़ा मैं सब फेंक कर आता हूँ। बाकी काम वह निमटाये।

ज़ीने की चार सीढ़ी सज गईं। इस आशा पर कि खोटे के जाने पर वे फिर खरे हो जायेंगे, औज़ार मान गये।

*　　　*　　　*　　　*

शाम को खोटे आया। मैंने आते ही कहा— शिकंजवी पीजिये।

उसके कानों में रस घुल गया। उसकी दृष्टि ······ उसकी दृष्टि से प्रेरणा पा कुमुद की दृष्टि ······ मैंने पैर ज़मीन पर फिराये। उड़ा नहीं। ठोस ज़मीन पर था। ढाढस बंधा।

वह बोला— मैंने नहीं पीता है।

और फिर बिना शिकंजवी पिए वह जम गया और उसने बम्बई की सुनानी आरम्भ की।

मैं और कुमुद भी बिना शिकंजवी के उसकी बातें सुनते रहे। उसका भूत, वर्तमान, आगे की लालसायें।

उसने अपने विचार व्यक्त किये— भलमनसाहत पर, स्वाधीनता पर, स्वच्छता पर, शालीनता पर, सरलता पर।

फिर उसने बताया कि बम्बई में दीवाली कैसे मनाई जाती है।

हमें पता लगा कि शशिकान्त बड़ा भला आदमी है और वह ज़रूर किसी दिन एक मिल का मालिक हो जायगा।

फिर उसने अपने अब फटा अब फटा बैग में से दो कोड़ी फोटो निकाले। एक एक करके उनसे हमारी विस्तृत मुलाकात हुई। किस हालत में, किन के, किस समय खींचे गये। बम्बई की प्रसिद्ध ऐक्ट्रेस जो शीघ्र

हीरोइन बनने वाली है, प्रधान मन्त्री केवलराम के पोते का फुफेरा साला, क्रिकेट के प्रसिद्ध खिलाड़ी मीनू का बेटा चीपू, चौपाटी पर शिकार खेलने वाली पारसिनें, मोटर में बैठी खरीदार।

तब एक बम्बई का बड़ा नक़्शा हमारे सामने खुला। कौनसी सड़क किस सड़क को काटती है? साइलेन्स ज़ोन कहाँ है? वनवे ट्रैफिक कहाँ है? उसका घर कहाँ है? उसकी सहेली श्रीमती सुधा पाटनकर का घर कहाँ है? जुहू क्यों नहीं रहना चाहिये? अन्धेरी की आबहवा क्यों खराब है?

तीन घण्टे हमारे साथ सत्संग कर उसने अठारहवीं सदी के दरबारी के समान झुक कर शिष्टाचार प्रदर्शन किया। जाते समय उसे बड़ा शोक हुआ। उसे जल्दी जाना पड़ा क्योंकि युद्धकालीन आदत छोड़कर आज-कल ट्रेन फिर समय पर आने लगी हैं।

मुझे बड़ी प्रसन्नता थी कि बातचीत में जो दो तीन शब्द मेरे मुख से निकले सब शुद्ध हिन्दी के थे। 'अच्छा!' 'अति सुन्दर।' 'कितना अच्छा हो यदि हम भी वहीं प्रस्थान करें।'

दूर अदृश्य होते रिक्शा को देखती कुमुद बोली— "कितना होनहार नवयुवक है!"

———

प्रेम की रस्सी और गाँठें

मियां अकड़फूं कहते थे कि मैं प्रेम रूपी बीमारी का शिकार नहीं हो सकता। पर पता नहीं, सड़क पर या किसी दावत में या कालिज में या किसी सम्बन्धी के या मेले में, उनकी ६ गज़ के लम्बे परिधान में लिपटी किसी कोमल खिंची-नेत्रों-वाली देह से भेंट हुई और सारी अकड़ धरी रह गई। भ्रमर-रंगी केशों में वे बंध गये; नेत्रों की लाली और गालों की लाली की तुलना में वे खो गये।

मित्रों ने पूछा तो बोले— यह दो मिनट का दिल को बहलाने का साधन है। और दिल उनका बहल रहा है ठण्डी सांसों से, भोजन कम करके, निद्रा दूर भगा कर। पुराने समय में योगी थे या आजकल वे हैं।

प्रेम की रज्जु देखने में बड़ी कोमल होती है, किन्तु एक बार उसके पाश में फंस जाने के उपरान्त उसमें से निकल भागना बड़ा दूभर होता है। आलिंगन करती हुई दो मृदु, लचीली, बेल-सम बाँहों की कल्पना दृढ़ से दृढ़ पुरुष, हमारे अकड़फूं को भी बांध लेने में समर्थ होती है।

अन्ततः कारण क्या है प्रेम की रस्सी का मृदुतम होने पर भी दृढ़तम होने का। यदि इस प्रश्न का उत्तर दिया जा सकता तो वह रस्सी दृढ़ हो ही नहीं सकती थी।

लेकिन जिस प्रकार रस्सी की गाँठें खुल सकती हैं उसी प्रकार प्रेम के बन्धनों को भी एक एक करके खोला जा सकता है। यह मेरा विश्वास है और मेरी बात सुनकर आप भी भरोसा कर लेंगे।

पर देखिये बात सुनने से पहले यह न कहिये कि कल का लौंडा हमें अक़ल सिखाने चला है। अक़ल तो आप भगवान की दी भी नहीं लेना चाहते। यह समझ लीजिये कि स्वयं भूल जाने के डर से मैं अपनी स्मृति

दुहरा रहा हूँ।

प्रेम के समुद्र से निकलने का एक ढंग है कि आप उसमें और गोते लगायें और अपने होश हवास को गधे के सिर का सींग बना दें जब तक आपको यह पता न चले कि आप एक पैरम्बूलेटर चला रहे हैं या जब तक आपके भाग्य पर दुःख और वियोग के कड़क भरे मेघ न मंडराने लगें क्योंकि आपकी वह, मेरा अर्थ समझ ही गये होंगे, किसी अन्य के साथ गठबन्धन करके चली गई हैं।

उस जीवन के लिये जो छोटा है और केवल सुखों से भरा होने के लिये संसार में आया है, दोनों अन्त बुरे अवसर हैं। सौभाग्य से आपके सामने एक अन्य राह भी दिखाई देती है जिसका प्रदर्शन करने के लिये आप मुझे धन्यवाद दें।

याद रखिये, इसकी जीवन में कोई भी आवश्यकता नहीं कि आप किसी तन्वांगी को सहारा देने वाले वृक्ष बनना चाहें। आप कहेंगे—

गंदुमी रंग भी है, जुल्फें स्याह फाम भी हैं।
मुर्गेदिल क्यों न फंसे दाना भी है दाम भी है॥

मैं क्या करूं, मैं अपनी भावनाओं का सन्तुलन स्थिर नहीं रख सका। प्रेम किया नहीं जाता, हो जाता है।

ठीक है आप प्रेम के वश में हो गये। अब पीछे पग हटाना असम्भव है। आप ने स्वतन्त्रता के बदले बन्धनों को गले का हार बनाया।

प्रेम के साथ साथ ईर्ष्या भी आपके हिस्से में आई। ज़रा से सन्देह से ही आप की हालत ख़राब हो जाती है।

आप रात को सो नहीं सकते। आँखों के सामने एक मूर्ति खड़ी रहती है जिसके आप बेदामों के गुलाम हैं। वह प्रत्यक्ष नहीं, अपने सूक्ष्म शरीर में आपके मानस-पटल पर अंकित है।

'दिल के परदे पर है तस्वीरे यार, जब ज़रा गरदन झुकाई देख ली।'

प्रेमी और पागल में केवल यही अन्तर होता है, प्रेमी कभी कभी अपनी बीमारी को दूर करने का प्रयत्न करता है।

क्या आप नहीं चाहते कि आपका मस्तिष्क फिर ठीक हो जाय, आप रात और दिन में पहचान कर सकें, फिर दिल खोल कर हँस खेल सकें।

मैं आपको इसका उपाय बताता हूँ।

आप उनकी मां की ओर देखिये, दादी की ओर देखिये यदि वह जीवित हो। यह मतलब नहीं कि मैं उनसे भी प्रेम करने की आपको सलाह दे रहा हूँ, वही अंग्रेज़ी कहावत 'एक नारी से प्रेम करने के लिये उसके कुत्ते से प्रेम करो'। पर आप उनकी मां और दादी को ग़ौर से देखिये, क्योंकि वे नमूना दिखाती हैं जो कुछ दिनों बाद आपकी उनको हो जाना है।

आप उनके पिताजी पर ध्यान दीजिये। कैसे आदमी हैं? रहन-सहन का ढंग क्या है? बातें करने पर आपको पता चला कि कुछ सनकी से हैं। देखिये, बुरा न मानिये। माना कि आपकी वह देखने में ऐसी नहीं प्रतीत होती हैं, न बातचीत करने में, फिर भी वह अपने पिताजी की पुत्री हैं और यह शायद आप जानते नहीं कि किसी से सम्बन्ध होने से पहले युवती बड़ी सावधानी से बोलती है। विवाह के थोड़े दिनों बाद ...... !

उनका भाई भी अजीब है। बात बात में तंग कर देता है। तमीज़ से बातें करनी जानता नहीं। अक्ल नाम की कोई चीज़ उसके पास नहीं फटकी। मैं उसकी बुराई नहीं कर रहा हूँ। पर विवाह के बाद आपकी और उसकी बातें और तेज़ी से हुआ करेंगी। तब वह अपना अधिकार समझेगा कि आप उसकी बुद्धिमानी की बातें सुनें और उनमें हाँ में हाँ मिलायें, चाहे उस समय आपका विचार उसका सिर फोड़ देने का क्यों न

हो रहा हो। खैर मनाइये, आप अभी तक बचे हुए हैं।

नहीं, मैं यह नहीं कहूँगा कि वह असुन्दर हैं, उनमें आकर्षण शक्ति नहीं है। लेकिन वह अभी युवती हैं, फिर उस पर मेकअप करती हैं। क्या आपने कभी उन्हें बिना पाउडर के देखा है? क्या आपने कभी उनसे पूछा है कि वह रात को चिकनाई लगा कर क्यों सोती हैं? आप में पूछने का साहस है? रहने दीजिये, मारिये गोली!

अब आप कुछ गाँठें खोलने में समर्थ हुए हैं। इन बातों पर सोचिये विचारिये, ग़ौर कीजिये, दुबारा ध्यान से पढ़ जाइये। इन्हें काटकर शीशे में जड़वा कर अपनी खाट के सामने की दीवार पर लटका दीजिये जहाँ प्रतिदिन सोते समय और उठते समय आपकी दृष्टि दौड़े।

यदि आप अपने मस्तिष्क पर ज़ोर दें तो इनमें इसी प्रकार की अन्य युक्तियां जोड़ सकते हैं।

लेकिन—

दिल के बहलाने को गालिब ये ख्याल अच्छे हैं।

मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि मैं अपना समय व्यर्थ नष्ट कर रहा हूँ।

कोई बात नहीं। आप सत्य की सतह तक पहुँच गये हैं। मुझे आप से ईर्ष्या होती है। नहीं, नहीं। आपको, क्रौंच के जोड़े को, मेरी हार्दिक शुभ कामना!

———

पिनकीराम ने मोटर चलाई

छोटे भाई ने जब एक पुरानी किन्तु नई बनी कार की कीमत चौबीस सौ रुपये बताई तो पिनकीराम की लार टपक पड़ी। श्रीमती पिनकीराम ने अपने मुंह से शब्द-रूपी भाप लगातार छोड़कर उसे सुखाने का बहुत प्रयत्न किया पर सब निष्फल। पिनकीराम पिनक में थे— जब मोटर कार उनकी हो जायगी, जब नगर में एक शोर मच जायगा कि पिनकीराम ने एक कार ख़रीदी है, जब यार दोस्त उन्हें नाई की दुकान पर जाते जाते भी पूछेंगे कि सुना है तुमने कार ले ली है, जब कार की खिड़की पर स्टीयरिंग की बगल में वे देवानन्द का पोज़ देकर किसी से बात करेंगे और सब जलेंगे! और लार बही जा रही थी।

आख़िर मोटर कार उनकी हो गई। पैट्रोल की सुगन्ध आने पर उनकी बहती बीमारी दूर हुई।

कार तो आ गई पर साथ मुसीबत लाई। पिनकीराम कार स्वयं चलाना चाहते थे, इसलिये किसी ड्राइवर को नौकर रख कर सीखना चाहते थे। श्रीमती पिनकीराम और उनकी शह पाकर बच्चे इसके विरोध में थे। वे विरोध का कारण पूछते तो उत्तर मिलता— कार चलाना क्या आसान है? भला ड्राइवर तुम्हें क्यों सिखाने लगा? वह तो सोचेगा कि इन्हें कार चलानी न आये जिससे उसकी नौकरी बहाल रहे। सिखाने के लिये बड़ी सहानुभूति चाहिये जो ख़रीद कर नहीं मिल सकती। वह तो चाहेगा कि ये कहीं टक्कर मार दें ······ और श्रीमती पिनकीराम रोना आरम्भ कर देतीं।

इसी शशोपंज में दो सप्ताह बीत गये और कार बेचारी चुपचाप खड़ी

देखती रही।

अन्त में यह तय हुआ कि पिनकीराम अपने मामा के लड़के को तार देकर बुला लें। वह दफ्तर से छुट्टी लेकर आ जायगा और कार चलानी सिखा जायगा।

तार पाकर ममेरा भाई घबराया हुआ आ पहुँचा। परन्तु कारण जानकर दिल में कुढ़ा और बाहर हँसा।

पाठ आरम्भ हो गये। चाबी लगाओ, चोक खींचो और एंजिन चालू करो। ज़रा गरम होने पर चोक बन्द कर दो। क्लच दबाओ और गिअर डालो। धीरे धीरे क्लच छोड़ो और धीरे धीरे एक्सीलरेटर दबाओ। गिअर की चालें बदलो। कोई सामने आ जाए तो फौरन क्लच दबाकर एक्सी-लरेटर वाला पैर उठाकर ब्रेक दबादो।

पिनकीराम की अवस्था काफी थी और भरे पूरे घर का उत्तरदायित्व था। फिर हर काम को ठोक बजा कर करने की उनकी आदत थी। ऊपर से श्रीमती पिनकीराम को उनकी चिन्ता थी और उस चिन्ता की पिनकीराम को चिन्ता थी। इसलिये ममेरे भाई की छुट्टियाँ समाप्त हो गईं और पिनकीराम को कार चलाना आ गया किन्तु नहीं भी आया। तब तक वे एक सुनसान सड़क पर पांच मील की रफ्तार से कार चलाना सीखे थे।

कार फिर खड़ी हो गई। घर की बगल में एक टीन का छप्पर डाल कर उसका गॅराज बन गया था। वहां पड़ी वह ठिठरने लगी।

क्योंकि पिनकीराम कार चलाना सीख चुके थे इसलिये श्रीमती पिनकीराम ने उन्हें तथा कार को ड्राइवर के हाथ सौंपने में कोई बुराई नहीं समझी। अखबार में मांग निकली दो तीन मास के लिये ऐसे ड्राइवर की जो कार को ड्राइव न करे अपितु कार के ड्राइवर का ध्यान रखे।

थोड़े समय की नौकरी और थोड़ी तनख़ा— काफी खोजने के पश्चात् एक आदमी को राज़ी किया गया।

कार फिर चलनी शुरु हुई। पिनकीराम ड्राइव करते थे और ड्राइवर हवा खाता था।

एक दिन पिनकीराम को दिल्ली जाना था। कार के दाना पानी का प्रबन्ध किया जा चुका था। पिनकीराम भी तैयार होकर बाहर टहल रहे थे। पर ड्राइवर का पता न था।

आख़िर पिनकीराम को क्रोध आया और क्रोध में कार अकेले चलाने की दिल की हड़कल ग़ायब हो गई।

कार का द्वार बन्द होने की ध्वनि सुनते ही श्रीमती पिनकीराम लपक कर बाहर आईं। "यह क्या? ड्राइवर कहाँ है?"

सिसकी सी रोकने का प्रयत्न कर पिनकीराम बोले, "नहीं आया।"

"नहीं आया तो तुम कहाँ जा रहे हो?"

"दिल्ली।"

"वाह, यह खूब रही। ऐसे दिल्ली कैसे जाने दिया जा सकता है?"

"क्यों?"

"ड्राइवर को आ जाने दो।" श्रीमती पिनकीराम के स्वर में कुछ अनुनय था।

"अच्छे रहे, यानी ड्राइवर मेरा नौकर नहीं हुआ, मैं उसका नौकर हो गया। साहब का इन्तज़ार करता रहूँ। उस उल्लू के पट्ठे से कल शाम ही बता दिया था कि आज दिल्ली जाना है।"

"आजकल के नौकरों के क्या कहने! हया शर्म तो आंख में रह नहीं गई। इनके लिये कितना ही कर दो पर सब बेकार। वक्त पर धोखा दे

जायंगे।"

कार का एंजिन स्टार्ट होता सुनकर श्रीमती पिनकीराम के भाषण में व्याघात पहुँचा। "क्यों जी, किसी को उसके घर भेज दो न?"

"मैं उसके बाप का घर भी नहीं जानता।"

कार बैक होकर सड़क पर आने लगी थी। साथ साथ चलती श्रीमती पिनकीराम बोली, "कार तेज़ मत चलाना।"

"दिल्ली में तीस मील प्रति घण्टा से आगे की रोक है।"

"हे भगवान्, तीस मील! ...... तुम बीस मील से अधिक मत चलाना।" श्रीमती पिनकीराम की आंखों में पानी था।

पिनकीराम को बीस मील भी अपने लिये तेज़ लग रही थी, पर बेगम पर रौब गाँठने को लाचारी दिखाई, "अच्छा, तुम कहती हो तो।"

"और भरे बाज़ार में मत ले जाना।"

"अच्छा।"

सब वादे होकर मोटर कार चली कि पहले चौराहे पर ड्राइवर आता मिल गया। पिनकीराम ने बीचों-बीच कार रोकते हुए पूछा, "क्यों बे, कहाँ रहा तू?"

तभी सिपाही की सीटी सुनाई दी। लाचार ड्राइवर को बिठाकर, सौ क़दम आगे जाकर पिनकीराम को कैफियत सुनने का अवसर मिला। कार फिर रोकी गई क्योंकि पिनकीराम एक समय में एक काम ही करने के हामी और आदी थे।

ड्राइवर की भोली सफाई थी— वह दूसरी जगह नौकरी की तलाश में था। कल उसे मिल गई। उसे पिनकीराम ने कुछ दिनों के लिये नौकर रखा था, तन्ख़ा कम दी थी। इसलिये वे उससे कुछ नहीं कह

सकते। आज बड़ी मुश्किल से वह अपनी दूसरी जगह से पहले दिन की छुट्टी मांगकर आ सका है; उसे दिल्ली जाना ध्यान था। इसके लिये पिनकीराम को उसका आभारी होना चाहिये।

माथे पर बल डालकर, आंखें संकुचित कर, मुख के तेवर चढ़ाकर, पिनकीराम ने सोचा— वे ड्राइवर को कुछ नहीं कह सकते। सचमुच उसने ऐहसान किया है। यदि वे इस ऐहसान को नहीं मानेंगे तो ड्राइवर का कुछ नहीं बिगड़ा है। वह कार से उतर जायगा और अपनी छुट्टी रद्द करा लेगा।

रस्सी जल गई पर ऐंठन नहीं गई। भौंहे चढ़ाये चढ़ाये पिनकीराम ने गाड़ी दिल्ली पहुँचा दी। ड्राइवर ने उन्हें दिल्ली घुमाया। लौटते हुए वे गाड़ी लाये।

जब घर आया तब अंधेरा छा चुका था। प्रतिदिन के अनुसार, पिनकीराम ने कार सड़क पर रोक ली। चाबी ड्राइवर के हाथ में देकर वे बोले, "ले भई, गाड़ी अन्दर रख दे।"

ड्राइवर ने फिर समझदारी की बात कही, "बाबूजी, गाड़ी गॅराज में ठूंसनी क्या मुश्किल है?"

"हैं!"

"आपका हाथ तो बहुत साफ हो गया है। आज ही कम से कम सौ मील चले होंगे।"

"हाँ।"

"कल से तो आप ही बाहर निकालेंगे और अन्दर रखेंगे। आज मेरे सामने दो तीन बार रखिये, बस अभ्यास हो जायगा।"

"अच्छा" कहकर पिनकीराम फिर ड्राइवर की सीट पर आ बैठे। कार स्टार्ट हुई और कांपती डगमगाती अन्दर जाने लगी।

कोई ऐसा वैसा मिलने वाला आया होगा जिसके लिये टीन के सायबान के नीचे मूढ़े बिछाये गये थे। ड्राइवर ने पहले उन्हें देखा—"बाबूजी, गाड़ी रोकिये। दो मूढ़े पड़े हैं, उन्हें उठा दूँ।"

पिनकीराम का स्नायविक फटीचर हो गया। घबरा कर ब्रेक लगाना चाहा तो एक्सीलरेटर को और दबा दिया।

'धाँय' की आवाज़ हुई। खैरियत हुई कि झटका खाकर एंजिन बन्द हो गया। कार का अगला भाग टूट गया, रेडियेटर पिचक गया, पंखा मुड़ गया। एक मूढ़ा लुढ़क गया, दूसरे की कपालक्रिया हो गई। दीवार का सारा प्लास्टर झड़ गया, पांच छः ईंटें चूरा हो गईं।

सारा मौहल्ला जुड़ आया।

———

देर किसने की

मुझे बहुत खेद होता है जब मेरे कारण पत्नी को इन्तज़ार करना पड़ता है और फिर देर होने के कारण सारा कार्यक्रम उलट पुलट हो जाता है। मेरा विवाह हुए पर्याप्त समय बीत चुका है और इस अपनी आदत के लिये मैं ही दोषी हूँ।

कुछ दिन पहले तक मैं उसके तैयार होने की बाट देखा करता था, इसमें उसका कोई दोष नहीं था। यह तो सर्वसामयिक तथा सर्वस्थानीय सत्य है कि स्त्री को सजने में कुछ समय लगना चाहिये। यह भी उसकी ग़लती नहीं कि साल-प्रति-साल बीतने पर उसे सुन्दर दीखने में अधिक समय लगने लगा।

इधर मेरी पुरानी बीमारी उभर आई। पुस्तक पढ़ने के चाव ने ज़ोर मारा। अब वह मुझसे तैयार होने के लिये कहकर चली जाती है और मैं मेज़ पर पैर टांगे पुस्तक पढ़ता रहता हूँ। फिर वह कुछ समय बाद— कितने मिनट बीते यह नहीं कह सकता क्योंकि मैं पुस्तक में मग्न होता हूँ— आती है तो मेरे तैयार होने की उसे बाट जोहनी पड़ती है।

उसी दिन की बात लो। उसकी सहेली के घर दावत थी। वह मुझे तैयार होने का आमन्त्रण देकर चली गई। मैं फ्रांस की तथाकथित बाल जीनियस सैगन का उपन्यास पढ़ रहा था। मुख कड़वा हो रहा था, पर मैं तो धत्ती था।

थोड़ी देर बाद शृङ्गार-मेज़ से आवाज़ आई— तैयार हो गये?

मैंने सिर हिला दिया। पर मैं उसे दीख कहां रहा था। इस बार प्रश्न का स्वर-स्तर तीखा था।

संक्षिप्त 'हाँ' कहकर मैं युवती की अपनी सच्चरित्र माँ से दुश्चरित्र पिता को बचाने की योजना में डूब गया।

"अरे, तुम भंगी बने ही बैठे हो।" उसने कमरे में प्रवेश किया जब दावत के समय से बीस मिनट ऊपर हो चुके थे।

मैंने अचकचाकर टांगें नीचे उतारीं। "तुम तैयार हो गईं?"

"दीख नहीं रहा।"

"बस, दो मिनट और। तीन पृष्ठ रह गये हैं।"

उसने पुस्तक छीनकर अलग फेंक दी, "मेरी सहेली के घर जाते तो तुम्हारी नानी मरती है।"

"ग़लत बात!" मैं कमीज़ उतारते हुए बोला।

"क्या मैं झूठ कह रही हूँ?"

"और क्या। वह तुम्हारी सहेली कहां से आई, मेरे मित्र की पत्नी है। तुम्हारा रिश्ता बाद का हुआ। और मैं अपने मित्रों के घर जाने में कभी नहीं घबराता।"

"सिवाय जब पुस्तक समाप्त हो रही हो।" वह मुस्करा दी।

देर में तैयार होने की आदत ने मुझे तूफ़ानी बना दिया है। बातें करते करते मैं तैयार हो गया था।

फीते बांधते हुए बोला, "चलो।"

"लेकिन मैं भेंट कहीं रखकर भूल आई। लो, तुम्हारी चिन्ता में सब कुछ भूल जाती हूँ।"

दस मिनट उपरान्त जब वह लौटी तब मैं लैस बैठकर अपना उपन्यास निमटा चुका था और उसे मालूम चल गया था कि भेंट की वस्तु छोटी होने के कारण उसके पर्स में ही बन्दी थी।

दरवाज़े से ही वह बोली, "रुकना ज़रा। दूध गरम हो गया है, वह बोतल में भरकर अम्माजी को दे आऊं, अमिता को पिला देंगी।"

कुछ देर बाद फिर दर्शन हुए। "बस, एक मिनट और! अम्माजी कह रही हैं जाड़ा बहुत अधिक है। शाल से नहीं जायगा। मैं अपना कोट निकाल लाऊं।"

कोट में वह अत्यन्त— मैंने प्रीतिसूचक सीटी बजाई। उसने लजाकर मेरी ओर देखा कि नखरे बदल गये। "यह क्या, वह शादी वाला सूट! पिछले साल जो सिलवाया था वह कहाँ गया?"

"मुझे शादी की याद बड़ी मधुर लगती है।" मैंने लल्लो चप्पो करनी चाही।

"तो उसे क्या कीड़े पहनेंगे?"

मैं हँसा, "एक अदना कीड़ा।"

किन्तु सब बेकार। हैंगर से मेरा सूट पलंग पर जा पड़ा। "पहनो।"

मैंने सूट बदल लिया।

उसने आलोचक की दृष्टि से मुझे सिर से पैर तक घूरा। मैं इधर उधर देखने लगा। "ठीक, चलो!"

दोनों के क़दम बढ़े।

"रुको, मैं अपनी साड़ी बदल लूँ।" वह अन्दर लपकी।

"क्यों, ठीक तो है।"

"कहाँ ठीक है? यह तुम्हारे सूट के साथ नहीं जाती। वह नौचन्दी से ख़रीदी पहन कर आती हूँ। वही जो चौंसठ रुपये में ख़रीदी थी।"

जब हम दोनों दावत में पहुँचे उस समय हाथ धुलाने में पाँच मिनट की देर थी। प्रतिदिन की भांति मुझे तैयार होने में देर लगने के कारण उसका कार्यक्रम गड़बड़ा गया था और मुझे बहुत खेद था।

हँसी के छींटे—एक रिसर्च

एक आदमी था। बड़ा निर्धन— ऐसा कि दो समय अपने परिवार के लिये खाना भी न जुटा सके। उसके कई बच्चे थे। अचम्भे की बात यह थी कि वे सब स्वस्थ और सुन्दर थे। आखिर लोगों ने उस पर मुकदमा ठोक दिया। वह जादूगर है। उसे जान से मार देना चाहिये। जज के सामने जब वह अपने बच्चों के साथ पेश किया गया तो आरोप सुनकर असीम हँसने लगा। बच्चों ने भी उसका साथ दिया। जज ने बिगड़कर हँसने का कारण पूछा तो वह बोला, "मैं अपने स्वस्थ जीवन का नुस्खा बता रहा हूँ। मेरा परिवार जैसा है वह इसी लिये कि हम प्रसन्न रहते हैं और निर्द्वन्द्व हँसी हँसते हैं।"

यही नुस्खा भारतीयों को पढ़ाना चाहिये— यह मेरा दृढ़ निश्चय इस कहानी को पढ़कर हो गया। मैंने इस पर रिसर्च करनी आरम्भ कर दी। भारतीय कम वर्ष जीवित रहते हैं – इसी लिये कि वे हँसना हँसाना नहीं जानते। वे हर समय रोते रहते हैं— इसी लिये। वे एक दूसरे की शिकायत करते रहते हैं— इसी लिये।

रिसर्च का आरम्भ यह निकला कि एक छींटों का कोष संगृहीत करूँ जो बच्चों, युवकों, प्रौढ़ों तथा वृद्धों का प्रथम कोष हो; जिसमें प्रतिदिन काम में आने वाली वस्तुओं के पीछे छिपा हास्य उपस्थित हो।

रिसर्च चलती रही और मुझे पता लगा कि मैंने कैसी सोने की खान में सिर दे मारा है। दिमाग़ टकराता रहा और कण इकट्ठे करता रहा। सब को हँसाने का मसाला जोड़ते जोड़ते मैं रोनिया हो उठा। अन्त में युवावस्था के प्रथम दस वर्ष बीत जाने पर, तीसवीं वर्षगाँठ पर मैंने अपनी

अधूरी रिसर्च प्रकाशित कर दी, जो नीचे दी हुई है :—

अभिमान मैं तुम्हें कुछ नहीं समझता।

अहंकार तुम मुझे क्या समझते हो?

अंतरात्मा वह वृत्ति जो हमें यह अन्तर्प्रेरणा देती रहती है कि कोई हमें देख तो नहीं रहा है।

असत्य विपत्ति के समय सबसे अधिक काम आने वाली बात।

अधेड़ अवस्था में आपसे दस वर्ष अधिक का प्राणी।

अधिकारी ऐसा व्यक्ति जो किसी काम को कर सकता है यदि दूसरे वह काम पूरा कर दें।

अन्तर्दृष्टि वह दृष्टि जो स्त्री को यह बताती रहती है कि वह सर्वदा सही होती है।

अहंमन्यवादी वह पुरुष जिसके मुख से दर्पण देखे बिना प्रशंसा का एक भी शब्द न निकलता हो।

अहंमन्यवादी वह व्यक्ति जो तुमसे अधिक शोर मचाने में समर्थ है।

अनुभव सब कुछ लुट जाने के पश्चात् दिमाग़ की चीकट।

अतिशयोक्ति वह सत्य जो कि बौखलाई हुई हालत में है।

अन्तरस्वर एक विचित्र स्वर जो प्रत्येक स्त्री को हमेशा यह बताता रहता है कि वह ठीक है चाहे वह ठीक हो या नहीं।

अमर साहित्य वह साहित्य जिसकी सब प्रशंसा करते हैं, पर पढ़ता कोई नहीं।

अनुभव व्यापारी द्वारा अपनी गलतियों को दिया हुआ नाम।

असभ्य विपक्षी का वह व्यवहार जिसे टोकने वाला स्वयं करना चाहता था।

अमीर भारत के गधे।

अमले अदालत के कंगले।

अधेड़ अवस्था वह समय जब बीमा एजेण्ट मित्र दिखाई देता है।

अफसर वह व्यक्ति जो जब आप देर में दफ्तर पहुँचते हैं तो जल्दी आ जाता है, और जल्दी पहुँचते हैं तो देर से आता है।

अमेरिकन राष्ट्रपति डाक टिकटों के लिये एक महंगा मॉडल।

अलार्म घड़ी निपूते माता-पिता को जगाने का एक छोटा यन्त्र।

असन्तोष आत्म-निर्भरता की कमी।

अफवाह अष्टपाद से अधिक पैर वाला जीव।

अहंकारी हवा भरा मस्तिष्क।

आपरेशन शरीर विधान में एक संशोधन।

आशावादी एक मनुष्य जो यह सोचकर अपने सेक्रेटरी से विवाह कर लेता है कि वह विवाह के उपरान्त भी उसे डिक्टेट करता रहेगा।

आलोचक वह व्यक्ति जो लेखक के लिखने के बाद उसे यह बताता है कि उसने क्या लिखा है, क्यों लिखा है।

आदर्शवादी जो राजनीति को राजनीति से दूर रखना चाहे।

आशावादी जो सोचता है सब भले के लिये है और वह सबसे भला है।

आलिंगन प्रेम को दर्शाने का ऊपरी ढंग।

आचरण भोजन करते समय आवाज़ न करना।

आत्मा वह वस्तु जो उस समय चुभती है जब और सब चीज़ें सुखद मालूम होती हैं।

आमदनी वह चीज़ जिसके अन्दर या बाहर रहना बहुत कठिन है।

आशावादी वह जो शेर के डर से पेड़ पर चढ़ जाय और वहाँ बैठकर दृश्य की सुन्दरता पर मुग्ध हो शेर को भुला बैठे।

आगामी कल कामचोरों का सबसे सरल बहाना।

आदर्श पति पत्नी के सिरदर्द को अपनी गठिया के समान महत्त्व देने वाला।

आलोचना वह वस्तु जो कुछ भी न करने पर, कुछ भी न कहने पर, कुछ भी न होने पर आप अपने से दूर रख सकते हैं।

आशावादी वह पुरुष जो एक स्त्री की बाट देख रहा हो और अपनी कार का एंजिन चालू रखे हो।

आशा कुत्ते की दुम में उपस्थित एक कण जिसे वह हड्डी मिलने की आशा में हिला रहा हो।

आशावाद प्रसन्न प्रकृति जिसके होने पर चाय की पतीली खौलते पानी से भरी होने पर भी गुनगुनाती है।

आशावादी वह व्यक्ति जो सोचता है कि अरुण आशावादी की परिभाषाओं से शून्य हो जायगा।

औरत-आदमी औरत दियासलाई की डिबिया और आदमी सिगरेट।

इत्यादि वह शब्द जो दूसरों को यह बोध कराता है कि आप उससे अधिक जानते हैं।

इतिहास उन घटनाओं का ग्रन्थीकरण जो कभी नहीं घटनी चाहिये थीं।

ईर्ष्या वह स्नेह जो सहज ही एक नारी को दूसरी के प्रति होता है।

ईमानदारी पकड़े जाने का डर।

उम्मीदवार वह व्यक्ति जो उस विषय पर खड़ा हुआ हो जिस पर जनता फंस सकती है।

उत्साह अनभ्यस्त और अनुभवहीन युवकों में पाया जाने वाला दुर्गुण।

ऊँट बिना नकली चोली पहने ऊँचे उठे एक स्तन वाला जीव।

एकतरफा बातचीत पति और सास में सम्भाषण ।

एक्सपर्ट आन गाँव का सिद्ध ।

एक्सपर्ट जो सीधी सादी बात को उलझी हुई तथा कठिन बना दे ।

एक्टर पुरुष जो सब कुछ होना चाहे, खुदी को छोड़कर ।

एडवोकेट वह जो तुम्हारी ज़मीन जायदाद शत्रु से बचाकर अपने लिये रख ले ।

ऐतिहासिक उपन्यास वास्तविकता पर उढ़ाया कल्पना का काला कम्बल ।

कुआँरा वह आदमी जिसे दौड़ धूप में आनन्द आता है पर शिकार को खाता नहीं ।

कवि एक ऐसा व्यक्ति जो तोप से बुलबुल का शिकार खेलता हो ।

कुआँरा वह आदमी जो नारियों के विषय में विवाहितों से अधिक जानता है नहीं तो वह कुआँरा क्यों रहता ।

कादंब, कांचन, कामिनी पुरुष को पागल बनाने का टॉनिक ।

कब्ज जब चौकोर भोजन गोल पेट में न फंस सके ।

कमेटी मनुष्यों का दल जो मिनट (minutes) रखता है पर घंटे बरबाद करता है ।

कूटनीतिज्ञ पुरुष, जो एक स्त्री को नहाते देखने पर कहता है—'क्षमा करें, श्रीमान् !'

कुआँरा पुरुष जो प्रेम में सौभाग्यशाली रहा ।

कहानीलेखक वह व्यक्ति जो अच्छी स्मरणशक्ति रखता है और सोचता है कि दूसरों की स्मरणशक्ति खराब है ।

कूटनीति अपने रास्ते पर दूसरों को चलने देना ।

कूटनीतिज्ञ जो हमेशा अपने को ग़लत समझा सके।

किशोरावस्था जब एक लड़का डाक के टिकट इकट्ठे करना छोड़ देता है और पोस्ट आफ़िस खेलने लगता है।

कार्यक्रम कार्य को क्रम से टालने का काग़ज़।

कुआँरा व्यक्ति जो कार्य करने से पहले सोचता है और फिर कर नहीं पाता।

कुआँरा जो समय पर ब्रेक मारना जानता है।

कूटनीति बिना छुरे के दूसरे का गला काटने की कला।

कोमलांगी जिसके मुख में मक्खन भी न घुल सके।

कुआँरा इस बात की याददाश्त कि उसकी प्रेमिका को उससे अच्छा पुरुष प्राप्त हुआ है।

कल-परसों काम से बचने की सबसे आसान विधि।

कमेटी ऐसे महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों का गिरोह जो अकेले कुछ नहीं कर सकते, मगर सब के साथ मिलकर इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि कुछ नहीं किया जा सकता।

कोतवाल शहर तैमूर के ताऊ।

कुमारावस्था जब व्यक्ति को टेलीफ़ोन का उत्तर देने की जल्दी समझ में आ जाय।

कुआँरा वह स्वार्थी, निर्दयी, अयोग्य पुरुष जिसने किसी भली स्त्री को एक तलाक़ देने से दूर रखा हो।

कर्ज़ काम में लेने पर जो चीज़ बढ़ती है।

कवि जो अपने छन्दों में आग भरे या आग में छन्द भरे।

कीर्ति खोने पर अनुभव होने वाला व्यक्तिगत गुण।

गाय ईश्वर द्वारा करुणा पर लिखी गई कविता।

गंजापन जब मनुष्य का दिमाग़ खुलना आरम्भ हो जाय।

गोल्फ	वह खेल है जिसमें एक डेढ़ इंच व्यास की गेंद ८००० मील व्यास की गेंद पर रखी जाती है। ढंग यह है कि एक डंडे से छोटी गेंद को मारा जाय बड़ी को नहीं।
गंवारपन	दूसरों का व्यवहार।
घर	वह स्थान जहां सब कुछ मिलने पर भी हमारा मिजाज़ नहीं मिलता।
घर	वह स्थान है जहाँ हमारे साथ सब से अच्छा व्यवहार होता है फिर भी जहाँ हम सब से अधिक असन्तोष का अनुभव करते हैं।
घर	वह स्थान है जहाँ से पोषण प्राप्त करने की अपेक्षा में हम सहर्ष अपना शोषण होने देते हैं।
घाटी	दो पहाड़ों के बीच का स्थान।
चिड़ियाघर	वह स्थान जहां पशु पक्षी आदमियों का अध्ययन करते हैं।
चित्रकार का मॉडल	युवती जो अपने मालिक के देखने पर ही काम करती है।
चुम्बन	कीटाणु फैलाने का फन्दा।
चोली	चींटों के बिल की मिट्टी को पहाड़ बनाने वाली खोज।
चुम्बन	जब शब्द बिल्कुल निरर्थक होते हैं उस अवसर पर बोलने को रोकने के लिये चतुराई से ढूंढ निकाला गया आपरेशन।
चतुरता	वह कला जिसके द्वारा आप स्त्रियों की वर्षगांठ तो याद रखते हैं मगर अवस्था भूल जाते हैं।
चुंगी	व्यापार में नफा चट कर जाने वाली डायन।
चुम्बन	दो व्यक्तियों को इतना पास लाने का साधन कि वे एक दूसरे की बुराई न देख सकें।
चतुराई	इन्कार करने की वह कला जिससे मिलती चीज़ हाथ से न जाने पाय।

चिपटना प्रेम प्रकट करने का गोलमोल ढंग।

चुनाव वह अवसर जब आपको अधिकार दिया जाता है कि आप अपना रुपया व्यय करने वाला चुन सकें।

छतरी एक के लिये बचाव और दो के लिये शॉवर-स्नान (फव्वारा)।

जम्हाई वह अवस्था केवल जिस समय विवाहित पुरुष अपना मुख खोल सकते हैं।

जिह्वा स्त्री के मुख का वह अंग जिसे भाग्य से ही कभी अवकाश मिलता हो।

जीवन मृत्यु से पहले की दुविधा।

जनसंख्या लेने वाला मनुष्य जो घर घर जाकर जनसंख्या बढ़ाता है।

जुआ कुछ के स्थान पर कुछ नहीं पाने का तरीक़ा।

जालसाज व्यक्ति जो अपना नाम स्वयं बनाता है।

जूरी व्यक्तियों का दल जो बुद्धिमान और तेज़ वकील को छांटने बैठता है।

जवानी अपने जीवन के शुरू के पचास साल और दूसरे के बीस।

जानपहचान वाला वह व्यक्ति जो उधार लेने के लिये मित्रता के योग्य हो पर देने के लिये नहीं।

जानपहचान वाला मित्रता की स्टेज जो निर्धन तथा सामान्य व्यक्ति से थोड़ी हो और धनी तथा प्रसिद्ध व्यक्ति से बहुत अधिक।

जीवन पहला आधा माता-पिता का अंगूठा, दूसरा आधा बच्चों की उंगलियाँ।

झूठा ऐसा व्यक्ति जिसकी कल्पना और तथ्यों में कोई भेद न हो।

झक्की — वह प्राणी जो तुम्हारे से पूछे जाने पर कि वह क्या अनुभव कर रहा है तुम्हें बतला देता है।

झक्की — वह प्राणी जो बोलता रहता है जब उसे कुछ सुनना चाहिये।

झक्की — वह प्राणी जो अपने बारे में बोलता रहता है जब आप अपने बारे में कुछ सुनाना चाहते हैं।

झूठा — श्रोतागण को सुन्दर, अनुकरणीय उदाहरण देने वाला।

टैलीविज़न — रेडियो जिससे आँखों पर ज़ोर पड़े।

टैलीफोन — शैतान द्वारा आविष्कृत यन्त्र जिसके कारण अनचाहे व्यक्तियों को अब अपने से दूर नहीं रखा जा सकता।

टिप — दूसरे के नौकरों को हमारी तन्खा।

ड्राइवर — जो इतना तेज़ होता है कि कार चलानी जानता है और इतना चतुर कि उसका मालिक नहीं होता।

तलाक — लोकतन्त्र दो व्यक्तियों के बीच में भी सफल नहीं हो सका।

तेजस्वी — किसी दूसरी नारी का पति।

तोता — दुनिया का केवल एक बोलने वाला प्राणी जो कोई बात सुनकर बिना नमक मिर्च लगाये वैसी की वैसी दुहरा देता है।

तेजवान — जो खाने कमाने के अतिरिक्त सब में पारंगत हो।

तुरत-उत्तर — सूट पहना हुआ अपमान।

दार्शनिक — वह आदमी जिसका दूध गिर जाय तो दुखी नहीं होता बल्कि सोचता है कि गिरे दूध में बहुत अधिक पानी मिला था।

दूसरी शादी — आशा की अनुभव पर विजय।

दिमाग़ — जिससे हम सोचते हैं कि हम सोचते हैं।

दुनिया — एक दर्पण जिसमें तुम हँसकर देखोगे तो सारा संसार हँसता नज़र आयेगा और अगर रोकर तो सारा जग रोयेगा।

दिवालिया — सजावट और प्लास्टर से नग्न खण्डहर की दीवाल।

दिल्ली की व्यस्तता — जहाँ सड़क की दूसरी ओर जाने के लिये उस ओर उत्पन्न होने की आवश्यकता पड़े।

दुर्भावना — आवारा राय जिसके अपने पैर नहीं होते।

दाँत-डाक्टर — जो भोजन पर अपने दाँत चलाने के लिये दूसरों के दाँतों की देखभाल करे।

दृढ़ता — अपने चरित्र का एक गुण जो दूसरे में हठधर्मी लगे।

देशभक्त — वह व्यक्ति जो अपने देश से बहुत प्यार करे और उससे अधिक से अधिक लाभ उठाये।

दानी — व्यक्तिगत रूप में जनता के चुराये धन के पाँच प्रतिशत से भी कम भाग को सामूहिक रूप में जनता को देने वाला चोर।

दुराचार — दूसरों को आकृष्ट करने की शक्ति को जनश्रुति द्वारा दिया गया नाम।

धनवान — ऐसा व्यक्ति जो अपनी आमदनी अपनी पत्नी तथा इन्कम-टैक्स विभाग में विभाजित करता हो।

धन — बुराइयों के पेड़ की जड़।

नर — बानर से यह शब्द निकला है। इसका अर्थ है बन्दर से उत्पन्न होने वाला।

नवयुवावस्था — जब कुछ लड़कियाँ 'ना' के स्थान पर 'हाँ' कहना आरम्भ कर देती हैं।

नेता — जो व्यक्ति अगले चुनावों के बारे में सोचता है जब कि राजनीतिज्ञ अगली पीढ़ी के बारे में।

नास्तिक प्राणी जिसका अदृश्य सहायक न हो।

नारी का दिल चन्द्रमा के समान वस्तु जो घटती बढ़ती रहती है और जिसमें बुढ़िया के स्थान पर एक नर होता है।

नारी के आंसू पानी का झरना जिससे संसार की सबसे शक्तिशाली बिजली उत्पन्न होती है।

नगर वह स्थान जहां कोई भी एक दूसरे की मुसीबत से परिचित न हो।

नर जो सिनेमा का एडवान्स बुकिंग दस दिन पहले करा लेगा लेकिन दिवाली का उपहार ख़रीदना दिवाली की सन्ध्या तक टालता रहता है।

नारी जवान और जबान का मिश्रण।

निराशावादी स्त्री ड्राइवर जो निश्चित जानती है कि वह अपनी कार एक छोटे तंग स्थान में पार्क नहीं कर सकती।

आशावादी पुरुष जो सोचता है वह प्रयत्न नहीं करेगी।

नारी जिसे अपने जन्मदिवस की दस तारीख़ याद हैं, पर यह याद नहीं कि किस तारीख़ को उसका जन्म हुआ था।

नारी जिसके आलिंगन में पड़ने और हाथों में पड़ने में बड़ा अन्तर होता है।

नेता जो नाव को स्वयं हिलाकर सब को यह विश्वास दिला सकता है कि सागर में भयंकर तूफान उठा है।

नाई एक तेजस्वी वाचाल पुरुष जो कभी कभी हाथ साफ़ करने को बाल और दाढ़ी मूंछ मूंडता है।

नख़रेबाज़ जो सब चीज़ का मूल्य जानता हो पर किसी चीज़ का मूल्य नहीं समझता।

नवीन युग जब युवतियां सड़क पर अपनी दादियों द्वारा बिस्तर में पहने गये कपड़ों से कम कपड़े पहनती हैं।

निराशावादी	जो दो बुराइयों में से दोनों को चुने।
नारी	जिसे बनाने के बाद न विधाता को चैन मिला है न नर को।
पगडण्डी	दो बिन्दुओं के बीच का सबसे ऊबड़ खाबड़ मार्ग।
प्रतिष्ठा	वह आड़ जिसका सहारा प्राणी अपनी मूर्खता छिपाने के लिये लेते हैं।
पति	जो अपनी विवाहिता को पहले आश्वासित कर देता है कि वह संसार की अन्य स्त्रियों से भिन्न है, अद्वितीय है और उसे इस बात पर विश्वास हो जाने के उपरान्त बेखटके उससे संसार की अन्य स्त्रियों की तरह का व्यवहार करता है।
प्रेम	वह हीरा जो जौहरी के मिल जाने पर कपूर के समान उड़ जाता है और अकेले रहने पर प्रकाश देता रहता है।
प्रकृति	एक स्त्रीलिंग विस्तार जिसकी किसी स्त्री के समान ठीक आयु कोई नहीं बता सकता।
प्रभाव	वह वस्तु है जिसे तुम समझते हो कि तुम्हारे पास है जब तक तुम उसे काम में नहीं लाते।
प्रेम	एक ऐसा खेल है जो रात होने पर भी नहीं रुकता।
पत्नी	वह नारी है जो अपनी दादी का चालिस वर्ष पहले कहा गया एक एक शब्द सुना सकती है पर अपने पति की चालिस मिनट पहले कही गई बात भूल जाती है।
पड़ौसी	जो हमारे घर की बातों को हमसे अधिक जानता है।
पक्षपातपूर्ण विचार	उन लोगों की सम्मति जो हमसे बिल्कुल सहमत नहीं होते।
प्रेम	एक ऐयाशी जो आत्मसमर्पण करने पर विवाह का रूप ले लेती है।
प्रतिभाशाली	वह व्यक्ति जो अपना पेट स्वयं नहीं पाल सकता।

प्रेमोपहार	मछली पकड़ने का दाना।
प्रोफेसर	पाठ्य-पुस्तक जिसमें बोलने के लिये तार लगे होते हैं।
पत्नी	जो पति से कहती है, 'जब मुझे तुम्हारी राय की आवश्यकता होगी, मैं तुम्हें दे दिया करूँगी।'
पण्डित, मुल्ला, पादरी	हर समय नरक में रहकर नरक से लड़ने वाले।
पेटी	उभरे हुए को और उभारने तथा सिमटे हुए को मिटाने का यन्त्र।
पत्नी	मालिक।
प्रेम	दिल की नसों का ढीला होना।
प्रेम	चन्द्रमा के समान घटने बढ़ने वाला।
पीढ़ी बताने वाला	जो तुम्हारा वंश उतनी दूर ले जा सकता है जितनी दूर तुम्हारा धन जा सकता है।
प्लेटोनिक प्रेम	पहली मुलाकात और पहले चुम्बन के बीच इन्टरवल।
प्रेम	आवरण जिसमें एक स्त्री दूसरी से भिन्न दिखाई देती है।
पत्नी	जो पहले पति के कपड़े टटोलती है फिर जेबें।
पत्रकार	जो पहले एक कहानी खोज निकालता है, फिर सत्य को उसकी ओर फंसाता है।
प्रतिभा	एक प्रतिशत प्रेरणा और निन्यानवे प्रतिशत पसीना।
प्रसिद्धि	उपयुक्त समय पर मरने का फल।
पुलिस	भलेमानसों की फजीहत की तदबीर।
पढ़ा लिखा झक्की	एक पुरुष जो ट्रेन में एक सुन्दर नारी की ओर नहीं देखता क्योंकि जो पुस्तक वह पढ़ रही है उसे पसन्द नहीं।
प्रगति	प्रत्येक जीवाणु की अपनी समावट से अधिक बढ़ने की लालसा।

पंक्चर गैरेज अभी बहुत दूर है, यह बताने का हार्न ।
प्रशंसा दूसरों का हमारा जैसा होने का हमारा नम्र अनुमोदन ।
प्रतिध्वनि वह आवाज़ जो स्त्री को अन्तिम शब्द कहने में हराती है ।
पढ़ा लिखा जो सैक्स के बारे में उसे ज्ञान के रूप में दिखाकर बातें करे ।
प्रोफेसर जिसकी जीभ तुम्हारे कान में हो और विश्वास तुम्हारी बुद्धि में ।
प्रसिद्धि वह वस्तु जो मरने के पश्चात् मिलती है ।
फिरकनी युवती जिसे देखकर युवक लट्टू बन जाँय और लट्टू के सामने वह स्वयं नाचना बन्द कर दे ।
फलित तक़दीर जानने के लिये तदबीर लड़ाना ।
फूल जिसे पाने के लिये कांटों रूपी परिवार में गुज़रना पड़े ।
फ्लर्ट रमणी जो सोचती है संसार के सब पुरुष उसके लिये बने हैं ।
फूल हवा में सुगन्ध फेंकने वाले ।
फरेबी व्यापार में शत्रु ।
फैशन वह गन्दगी जिसे हर छः महीने में बदलने को हम बाध्य होते हैं ।
बुढ़ापा वह अवस्था जब तुम अपने को शनिवार की शाम को उस दशा में अनुभव करते हो जिसमें पहले सोमवार की सवेरे करते थे ।
बुद्धिमत्ता एक विशेष गुण जो उन व्यक्तियों में अधिक मात्रा में होता है, जो हमारी बातें ध्यानपूर्वक सुनकर उनसे सहमति प्रकट करते हैं ।
बुढ़ापा जब आप अपने स्वप्नों को पीछे छोड़ आये हों, जब

आपकी आशायें सो गई हों, जब आप भविष्य के प्रति लालायित न हों, जब आपकी महत्त्वाकांक्षायें ठण्डी पड़ गई हों।

बसन्त ऋतु जब पुरुष वह सोचने लगते हैं जो स्त्री सारे साल सोचती रहती हैं।

बच्चे शोर मचाने वाले वयस्कों का छोटा प्रतिरूप।

बैंकर व्यक्ति जो सूर्य के निकले रहने पर तुम्हें छाता उधार दे देता है पर वर्षा की पहली बूँद गिरते ही उसे वापिस मांगने लगता है।

बजट व्यय करने से पहले और व्यय करने के बाद चिन्ता करने का काग़ज़।

बुद्धिमान जो नरगिस का नाम सुनने पर फूल की कल्पना करने लगे।

बुढ़ापा खाली बैठे का मानसिक रोग।

बुढ़ापा जब लोभ-लालसा में फंसने के स्थान पर उसे ढूँढना अधिक दूभर होता है।

बच्चों के खेल वे खेल जिनमें आप अपनी पत्नी से हार जायँ।

बलात्कार प्रेम में प्रजातन्त्र।

बैंक एक संस्था जहाँ से आप कर्ज़ ले सकते हैं यदि आप पर्याप्त गवाही दे सकें कि आपको उसकी आवश्यकता नहीं है।

बम्बई वह स्थान जहाँ व्यक्ति पैसा जो उसने कमाया नहीं है, उन चीज़ों पर जिनकी उसे आवश्यकता नहीं, उन्हें दिखाने के लिये जो उसे पसन्द नहीं, व्यय करता है।

बजट व्यय करने से पहले ही चिन्ता करने का ढंग।

बहुविवाह प्राचीन प्रथा जो अब क़िस्त के आधार पर चलाई

जाती है।

भीड़ वह मनुष्यों का ढेर जिसमें हर मनुष्य हर ओर को बहक रहा हो।

भाप पत्रों को खोलने का वैज्ञानिक साधन।

भाषा हमें अपने भाव छिपाने के लिये दी गई चीज़।

भाषण सीने से निकलने वाले ज़ोरदार स्वरों को मस्तिष्क से आने वाली तरंगों का भास कराने की कला।

भेद विवाहित की युवती-मित्र।

भेड़िया तेज़ी से काम करने वाला जो पीछे अपना निशान नहीं छोड़ता।

भेड़िया वह पुरुष जो एक स्वेटर पहने युवती को ले जाता है और उसके नेत्रों पर ऊन खींचने का प्रयत्न करता है।

भाग्य आलसियों का मदालस।

भावुकता वह नाम जो सदा दूसरों के भावों के लिये सुरक्षित है।

मूंछें होठों को चूमते समय पाउडर को झाड़ने की झाड़ू जिससे होठों का असली रस लिया जा सके।

मद्यनिषेध नालियों को साफ रखने का एक ढंग।

मूर्खता ऐसी बीमारी जिसका कोई इलाज नहीं।

मनुष्य एक विचित्र प्राणी है। इसका शरीर इतना संवेदनशील है कि पीठ थपथपाने से सिर फूलने लगता है।

मुस्कराहट आपके मुख के वातायन पर फैला वह प्रकाश है जिसे देखकर जाना जा सकता है कि आपका मन आपके स्थान पर है, कहीं भटक नहीं रहा।

मनोवैज्ञानिक वह व्यक्ति जो किसी सुन्दर लड़की के कमरे में प्रवेश करने पर उसे न देख कर दूसरों को देखना आरम्भ कर देता है।

मुसीबत मोल लेने के इच्छुक को यह वस्तु सर्वदा मन चाहे दामों पर मिल जाती है।

मोटा मनुष्य भगवान् जब आदमियों को बनाते बनाते थक गया तो उसने एक ठेकेदार को बुलाकर ठेका दे दिया। वह ठेकेदार पहले तो ठीक घड़ता रहा, पर जब उसने देखा कि मसाला काफी बच गया है तो थाप थाप कर मोटे डाल दिये।

मैत्री दूसरों की कमियों पर ध्यान न देने का गुण।

मौन तिरस्कार की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति।

मित्र एक ऐसा व्यक्ति जो आपको भली भांति जानते हुए भी आपको चाहता है।

मोनोलीग एक स्त्री की बातचीत।

कैटेलोग दो स्त्रियों की बातचीत।

मित्र वह व्यक्ति जो निस्सन्देह कर्ज़ मांगेगा।

मौसम बताने वाला वह व्यक्ति जो एक युवती की आंखों में झांक कर मौसम बता दे।

मुस्कान सुन्दरता की तलवार।

मौन बातचीत का सर्वोत्तम ढंग।

मूर्खता अन्य मनुष्य का भाग्य।

मूर्ख दर्पण के सामने खड़ा व्यक्ति।

मोह मन के बुढ़ापे का नाम।

मछली पकड़ने की बंसी एक ऐसी डंडी जिसके एक सिरे पर मछली होती है और दूसरे पर मूर्ख।

मृत्यु-किरण वह दृष्टि जब बाज़ार में किसी अन्य स्त्री के देखने पर पति की ओर पत्नी डालती है।

मित्र वे व्यक्ति जो तब तक साथ रहते हैं जब तक कर्ज़ उन्हें

अलग न कर दे।

मालिक	वह व्यक्ति जो आपके देर से आने पर जल्दी आ जाता है और जल्दी आने पर देर से आता है।
मित्र	वह भेंट जो तुम अपने आपको देते हो।
मध्यावस्था	जब व्यक्ति का मध्य भाग चिन्ता उत्पन्न करने लगे।
मितव्ययिता	आज की आवश्यकता से दूर रह कर कल के विलास के लिये पैसे बचाने का ढंग।
मित्र	वे व्यक्ति जिनका समान शत्रु हो।
मच्छर	ईश्वर द्वारा उत्पन्न किया जीव जिससे मिलने पर हम मक्खियों को भूल जाते हैं।
मोटापा	पेट में पहुँची बचत।
युवावस्था	जब विचार वाणी का रूप लेते हैं और वाणी सत्य बन जाती है।
यश	गंजे सिर और मोटे बैंक बैलेंस का बेटा।
राजनीतिज्ञ	जो चाय के प्यालों और पानी के गिलासों के साथ संसार की राजनीति पर गरमागरम बहस करें।
राजनीतिक दल	एक षड्यन्त्र जो शेष व्यक्तियों के विरुद्ध किया जाता है। इसमें लोग अज्ञानता से प्रवेश करते हैं और लज्जा के कारण बाहर नहीं आ पाते।
रैफरी	ऐसा व्यक्ति जिसे सालों खेल के नियमों का अध्ययन करके भी दर्शकों से, जो कभी नियमों का अध्ययन नहीं करते, आधा ही ज्ञान होता है।
राजदूत	अपने देश की भलाई के लिये देश से बाहर निकाला गया भला व्यक्ति।
रमणी के नेत्र	कानून से भी अधिक शक्तिशाली हथियार।

रमणी के आंसू किसी भी तर्क से अधिक प्रभावशाली बात।

रोनिया व्यक्ति जो व्यंग विनोद पढ़कर भौंहें चढ़ाता है।

रम्बा नृत्य जिसमें तुम्हारा अग्रभाग एक सुन्दर कैडीलक की तरह शान्त चलता है पर पीछे का भाग जीप की भांति उछलता कूदता है।

राजनीतिज्ञ एक व्यक्ति जो हर समस्या पर मुँह खोलकर विचार करता है।

राजनीतिक युद्ध जिसमें हरेक मुख से गोले छोड़ता है।

रेडियो बच्चों के शोर गुल को दबाने का यन्त्र।

राजनीति गन्दी से गन्दी गाली को सुन्दर से सुन्दर सज्जा में कहना।

रात भगवान की बनाई अन्धेरी चीज़ जिससे अपने सपनों में हम सुन्दर लग सकें।

राजनीतिज्ञ वह है जो धनिकों और निर्धनों को एक दूसरे से बचाने का वायदा कर धनिकों से पैसा खींचता है और निर्धनों से वोट।

राजा शतरंज के मोहरे।

राजनीति लड़ाई झगड़े ढूँढने की, सब जगह उन्हें पाने की, उन्हें गलत समझने की तथा गलत तरीके काम में लाने की कला।

लड़का शोर गुल और गन्दगी।

लावण्य भौंह-संकुचन से तूफान उठाना।

लाल फीता एक तरह की चोली जो ढेले को पहाड़ बना दे।

लेनदार देनदार से तेज़ स्मरणशक्ति वाला प्राणी।

लालच जिससे लड़ने पर सुख पहुँचता है लेकिन जिसमें फँसने पर और अधिक सुख पहुँचता है।

विवाह एक व्यक्तिगत लालसा का जनता में प्रचार।

विधवा वह भाग्यवान स्त्री जो पुरुष के बारे में सब कुछ जानती है और जिसके बारे में जानने वाला पुरुष मरा होता है।

वृद्ध यदि स्त्रियों की ओर देखने पर तुम्हें उनका फैशन भद्दा लगे तो समझ लो वृद्ध हो गये।

विवाह वह प्रणय-कथा जिसके प्रथम परिच्छेद में ही नायक का अन्त हो जाता है।

विवाह क़ानूनी दफ़ा जिसके अनुसार शिकार करने के उपरान्त आप शिकार को अपने पास रख सकते हैं।

वयस्क जो दोनों सिरों से बढ़ना बन्द करके केवल बीच से बढ़ता है।

विनोद समझने की शक्ति जो तुम्हें उस चीज़ पर हँसने को मजबूर करती है जो यदि तुम पर घटती तो क्रोध से पागल हो उठते।

विख्यात व्यक्ति जो ख्याति पाने के लिये जीवन भर परिश्रम करता है और ख्याति मिलने पर अपने को छिपाने के लिये मोटे मोटे शीशे नेत्रों पर चढ़ा लेता है।

व्यवस्थापक जो स्वयं बैठा सोचता रहता है और दूसरों को अपना काम करने के लिये रखता है।

व्याकुलता जब तुम किसी का नाम लेकर पुकारो और तभी तुम्हें ध्यान आये कि वह एक प्रसिद्ध गाली है।

व्यक्ति मुस्कान और आँसू के बीच घूमता पैण्डुलम।

विद्वान पढ़ने में समय खोने वाला आलसी।

विक्रेता जो आप को यह मना कर छोड़े कि आपके पास वह चीज़ होनी ही चाहिये जो वह अपने पास नहीं चाहता।

विवाह वह अवस्था जिसमें नारी दिन में सोलह घण्टे काम करना स्वीकार कर लेती है।

वृद्धावस्था वह समय जब पुरुष वेट्रेस (खाना परोसने वाली) के स्थान पर भोजन की ओर अधिक ध्यान देते हैं।

विवाह पूछने पर ५ व्यक्तियों ने इस महान् लोकाचार की पांच परिभाषायें दीं। ये हैं वेः—

डाक्टर— एक ज्वर जो ताप से आता है और शीत पर समाप्त होता है।

वकील— महज़ एक इकरारनामा।

अभिनेता— शोक हर्ष का नाटक जिस पर देखने वाले तालियाँ बजाते हैं।

संगीतकार— एक संगीत मण्डली जिसमें प्रेम बांसुरी बजाता है, बच्चे ढोलक पर ताल देते हैं, पड़ौसी अपनी अपनी नफीरी पर सुबह शाम एक करते हैं, और दूल्हा अपनी हज़ार तार की सारंगी पर राग छेड़ने की प्रतिज्ञा में जीवन बिता देता है।

सैनिक— एक युद्ध जो कभी ७ वर्ष चलता है और कभी ३० वर्ष।

वक्ता जो गहराई की कमी को लम्बाई में पूरा करते हैं।

विक्रेता वह है जो यह सिद्ध कर सके कि ऊँचा मूल्य कितना कम है।

विज्ञापन जिस चीज़ के बारे में तुमने आज तक नहीं सुना उसके बारे में पूर्णजीवनीय लालसा अनुभव कराने का साधन।

व्यवसायी जो आफिस में खेल की बातें करता हो और पूर्ण सन्ध्या और रात्रि व्यवसाय की।

विश्वास उन मनुष्यों द्वारा कही गई जो ज्ञान के बिना बातें करते हैं, उन वस्तुओं पर जिस तरह की आज तक कहीं न घटी हों, बिना गवाही के स्वीकृति।

विनोद	कुछ को हँसाना और अधिक को रुलाना।
विलासिता	वह चीज़ जिसे बनाने में ५ रु० लगें और बेचने में बीस।
वक्ता	जो तुम्हारा जीवन देश पर लुटाने के लिये हर समय तैयार हो।
वक्तृता	दो मिनट के विचार को दो घंटे की वर्णमाला में घोल मिलाने की कला।
विवाहोत्सव	दो भाग-दौड़ों के बीच का विश्रामस्थल।
शादी	रात के उल्लू को काबुक का कबूतर बनाने का प्रयास।
शादी	तुम्हारी पत्नी किस प्रकार का पुरुष पसन्द करती है यह ढूंढ निकालने का ढंग।
शादी	वह जन्म कैद जिसमें बुरा बर्ताव करने पर जल्दी छुटकारा मिल जाता है।
शराब	वह पानी जो तुम्हें दुगना देखने पर किन्तु आधा सोचने पर विवश करता है।
शास्त्रीय गायन	जिस गायन के प्रत्येक उतार-चढ़ाव को सुनकर भान हो कि गायक के कण्ठ से अब कोई मधुर स्वर फूटने वाला है परन्तु सुनने वालों को हर बार निराश होना पड़े।
शिक्षा	किसी कमरे में आधा घण्टे कॉलिज के युवक-युवतियों के साथ बैठकर प्राप्त किया ज्ञान।
शराब	जिसमें भेदों को छोड़कर सब चीज़ सुरक्षित रखी जा सकें।
शान्तिसमर्थक	जो संसार में शान्ति रखने के लिये मुक्का दिखाये।
शान्ति	अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दो युद्ध-कालों के बीच में धोखा-धड़ी का काल।
सत्य	एक झूठ जिसे कई बार बोला गया हो यह जानते हुए कि कोई उसकी काट नहीं करेगा।

सहानुभूति वह वस्तु जो एक स्त्री दूसरी स्त्री को उससे किसी गुप्त वार्ता को पूर्ण रूप से जानने के पश्चात् भेंट करती है।

सोना पुराना सिद्धान्त: एक साइन-बोर्ड जिसे स्त्री अधिक से अधिक दिखलाकर पति को धनी तथा अपना दास बताती थी।

नया सिद्धान्त: एक चीज़ जिससे दूर रहकर आधुनिका अपने को पति से स्वच्छन्द समझती है।

स्त्री स्त्री होना सब से कठिन कार्य है क्योंकि इसमें मुख्यतया पुरुषों से वास्ता पड़ता है।

स्त्री-स्नान-सूट जब उसने अपनी प्रेमिका के सूट को बिल्कुल ज़रा सा होने की शिकायत की तो रमणी ने हँसकर उसे बिल्कुल ही उड़ा दिया।

सत्य सब से मज़ेदार विनोद।

स्वार्थी वह व्यक्ति जो किसी योग्य युवती को विवाह-विच्छेद के सुख से वंचित रखता है।

सफलता नये सम्बन्धी उत्पन्न करने की दवाई।

सुरा, सुवर्ण, सुन्दरी पुरुष को स्वर्ग पहुँचाने की सीढ़ियां।

सुशील नारी का सौन्दर्य दूरस्थित ज्वाला या पहुंच के बाहर तेज़ तलवार के समान है। जो उसके अति निकट नहीं जाते, उन्हें वह न जलाती है और न घायल करती है।

स्त्री युवक की प्रेमिका, प्रौढ़ की मित्र और वृद्ध की नर्स।

सफल पुरुष वह जो अपनी पत्नी के सम्भावित व्यय से अधिक आय करता है।

सफल स्त्री वह पत्नी जो फिर भी सारी आय व्यय कर डालने में सफल होती है।

सभ्यता मुंह बन्द कर जम्हाई लेना।

सम्बन्धी जो तुम्हारे साथ रहने में आनन्दित होते हैं।

सुख निराशा और दुःखान्त के बीच में क्षणिक समय।

स्वर्ग परियों की कहानियों का स्थान।

सफलता उतराई से पहले की चोटी।

साहित्य २१ प्लाटों का लगातार दुहराना।

सम्मति किसी चीज़ पर जिसे आप पहले ही तय कर चुके हैं दूसरे की सलाह लेना।

सभ्यता कुछ मनुष्यों की पापभरी आकांक्षाओं का नाम।

सभ्य वनचारी हिरन को आवारा समझने वाला घरघुसड़ा।

सीटी मानवी रेस (दौड़, जाति) को आरम्भ करने का सिगनल।

सुन्दर पुस्तक वह पुस्तक जिसके कवर पर एक युवती हो और युवती पर कोई कवर न हो।

सफल उम्मीदवार जात-पांत और वर्ग का हामी।

सहायक तुम्हारे जहाज़ बनाने पर समुद्र उत्पन्न करने वाला।

समृद्ध अनावश्यक वस्तुओं के लिये अधिकतम मूल्य देने वाला।

समृद्धि वह चीज़ जो राजनीतिज्ञों के लिये व्यापारी उत्पन्न करते हैं।

समयपालन दूसरा व्यक्ति कितनी देर में आयेगा इसका अनुमान लगाने की कला।

संगीतज्ञ किसी नारी को स्नानगृह में गाते सुन द्वार की दरार में कान लगाने वाला पुरुष।

सोडा अनाकर्षक युवती।

स्थायी प्रेम अन्त तक अस्वीकृत रहने वाला प्रेम।

साहित्यिक चेतना दो महान् साहित्यिक जो एक नगर में रहते हों और परस्पर कट्टर शत्रु हों।

सलीका जुराब की एड़ी गायब हुई दीखने पर भी नये जूते दिखाने की मांग करने का ढंग।

सलाह जो लेने के बजाय सर्वदा दी जाती है।

सन्धि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दो चोरों का गठबन्धन जिनके हाथ एक दूसरे की जेबों में इस बुरी तरह फँसे हुए हैं कि अलग रह कर तीसरे की जेब नहीं काट सकते।

सभ्यता प्राप्त करने के उपायों से अधिक आवश्यकताएँ उत्पन्न करने का ढंग।

सभ्य देश जो दूसरे सभ्य देशों से जले।

सलीका झूठ को एक गुण तथा अहंमन्यता को प्रशंसनीय बनाने का ढंग।

स्वाधीनता प्रत्येक को दूसरे के मामलों में हस्तक्षेप करने का पूर्ण अधिकार देना।

सफलता वह इकला पाप जो दूसरों से क्षमा न किया जा सके।

सुनहरी बाप के धनी होते ही बेटों के केशों का रंग।

हीरा संसार का सबसे कठोर पदार्थ जो महिलाओं पर भी छाप डालने में समर्थ होता है।

हत्या यदि कुछ कमज़ोर मिलकर बलवान को मार डालें— और **युद्ध**— यदि कुछ बलवान निर्बलों को मार डालें।

हंसना किसी के ग़म पर लकड़बग्घे की आवाज़।

हीरा नारी के अनुसार सफलता की सीढ़ी का पत्थर।

क्षितिज जहाँ दो वस्तुएँ मिलती हैं पर पास पहुंचने पर लुप्त हो जाता है।

क्षमा पत्नी से बहस हो जाने पर केवल यही शब्द है जिसका पुरुष को उत्तर नहीं मिलता।

ज्ञान पत्नी को प्रसन्न रखने की कला।

पकड़े गये

उसने ओंठ भींचकर कुछ कहा। मेरे पल्ले कुछ नहीं पड़ा। यह मेरे चचेरे भाई बांके लाल गुप्ता की पुरानी आदत थी। घर पर तो किसी तरह कान लगाकर, ओंठ फड़फड़ाने को पढ़कर, 'क्या कहा' 'फिर से' कह कर आप कुछ समझ सकते थे, किन्तु सड़क पर उसका कहा एक भी शब्द समझना असम्भव था।

मैंने कहा, "क्या कहा?"

वह समझता था कि 'क्या कहा' 'फिर से' मेरी आदत है। इसलिये उसने उसी स्वर में फिर कुछ बुदबुदा दिया।

मैंने कुछ न सुनते हुए भी कहा, "हूँ।"

वह कुछ बहरा भी था। उसके कान में सड़क की भीड़ का शोर गुल नहीं पड़ रहा था, नहीं तो वह अवश्य स्वर ऊँचा उठाता।

वह बोलता रहा, और मैं सिर हिलाता रहा, 'हाँ' 'हूँ' करता रहा।

वह हमारे नगर से बीस मील दूर कस्बे में रहता था। नगर में उसकी ससुराल थी, सो बहुधा दर्शन हो जाते थे। आज भी वह तीन मास बाद बाज़ार में टकरा गया था।

जब उसकी बातें समाप्त हो चुकीं, तो मैंने मन में बीस बार दुहराये शब्द बोल दिये, "घर आओ।"

उसके मुख पर एक विस्मय की झलक आई। पर उसने सिर हिलाकर हामी भर ली।

हम दोनों अपनी राह पर हो लिये।

अगले दिन ग्यारह बजे के लगभग मेरा टेलीफोन टनटनाया। एक मीठी स्त्री-ध्वनि ने पूछा, "क्या आप मिस्टर गुप्ता हैं?"

"हाँ।"

"क्या मिस्टर गुप्ता बोल रहे हैं?"

"जी हाँ, मैं ही सुन रहा हूँ।"

"आपको जानकर प्रसन्नता होगी कि मैंने आपके लिये बिस्तर रख लिया है।"

मैं अचकचा उठा, "मैं .... बिस्तर?"

वह रुपहली हँसी हँसी, "आप बड़े भुलक्कड़ हैं। मैं शान्ति बोल रही हूँ।"

शान्ति नहीं अशान्ति कहो कुमारी जी। मेरे मन में प्रसन्नता और खेद दोनों हुए।

"जी।"

"अब आप फौरन बालू रोड चले आयें। आपरेशन की सब तैयारी हैं।"

"आपरेशन!"

"घबराइये नहीं, आपकी पत्नी को नहीं पता चलने दूँगी।"

मेरा मस्तिष्क चक्कर पर सवार था। मेरे में इतना साहस कि किसी युवती के साथ इस प्रकार फ्लर्ट कर सकूँ! अवश्य कोई गलती है! पर वह तो मेरा नाम भी जानती है! शायद उसने मुझे कहीं देखा हो! किसी पार्टी में परिचय हुआ हो! आज की भारतीय नारी कहाँ जा रही है!

खैर, मैं जाऊँगा ज़रूर। भय को रोमान्स के भाव ने दबा दिया।

मैंने तैयार होना आरम्भ किया। मन अपने आप मुझे सुन्दरतम कपड़े पहनने को बाध्य कर रहा था।

तभी पत्नी कमरे के अन्दर आई। साथ में मेरा चचेरा भाई था।

"कहाँ की तैयारी है?"

मैं जैसे चोरी करता पकड़ा गया। चचेरे भाई को अभिवादन का उत्तर नहीं मिला। "कहीं नहीं, कहीं नहीं, ज़रा घूमने जा रहा था।"

पत्नी मुस्करा उठी, "दिन के बारह बजे घूमने?"

"नहीं, ज़रा काम था।"

"कैसा काम, तुमने पहले तो बताया नहीं।"

अब मुझे क्रोध चढ़ आया। "मुझे बीस तरह के काम हैं। सब तुम्हें बताकर अपनी इनर्जी खर्च करूँ।"

"बिगड़ने की क्या बात है। मैं तो इसलिये पूछ रही थी कि पहले बता देते तो खाना जल्दी बना देती।"

"भूल गया।"

"अब खाने का तो गड़बड़ हो गया। पता नहीं किस समय लौटोगे।"

"जल्दी ही करूँगा। भाई साहब भी तो बैठे हैं।"

अपना नाम सुनकर बाँके लाल जी ने कुछ कहा जो हमेशा की तरह मेरे पल्ले नहीं पड़ा।

पत्नी के मुख से निकला, "हैं जी!" और हम दोनों ने उनकी ओर कान किया।

वे फिर कुछ बोले। मैंने नहीं सुना। पत्नी ने कहा, "ये कह रहे हैं कि इनका कोई फोन तो नहीं आया।"

मैंने उनसे पूछा, "कहाँ से?"

पत्नी के बात दुहराने पर शायद वह शरमाये थे या मेरे कान ही अधिक खुल गये थे। मैंने उन्हें बताते सुना कि उनके घुटने में गड़बड़ है। कार्टिलेज को ठीक करने के लिये आपरेशन होगा। बालू रोड पर स्थित अस्पताल में ही जगह खाली— वह भी शायद— थी। आज प्रतीक्षालय नर्स का फोन मेरे यहाँ आना था।

मैंने उन्हें फोन का समाचार सुना दिया। मेरे बजाय वे भागे। और स्त्रियों की सहज-बुद्धि को क्या कहूँ। पता नहीं कैसे, पत्नी मेरी जाने की जगह भाँप गई थी और उल्लू बना रही थी।

———

मात खा गया

आप अपनी पत्नी को पहचान गये हैं?

मैं अपनी पत्नी को नहीं समझ पाया हूँ।

परसों जब वह बाज़ार से लौटी तो उसके हाथ में एक नीलाम का नोटिस था। किसी सैनिक अफसर का तबादला हुआ था और उसका सामान आज के दिन नीलाम होना था।

मैं उस नोटिस को देखते ही घबरा गया। अवश्य इसमें महीने का बजट बिगाड़ने का नुस्खा है।

मैंने सरसरी निगाह नोटिस पर फेरते हुए कहा, 'नीलाम! लोगों को दिन दहाड़े लूटने का ढंग है। पांच का कूड़ा पन्द्रह पर छूटता है।"

मेरे इस बुद्धिमानी के वक्तव्य को कोई बढ़ावा नहीं मिला।

मैंने बात पलटी, "इसमें अपने काम की कोई चीज़ भी तो नहीं है।"

"बस, तभी तो कहती हूँ कि आदमी आँख रहते भी अन्धे होते हैं। इन्हें इतनी चीज़ों में से अपनी मनचाही चीज़ दिखाई नहीं दी।"

मैंने इस बार गम्भीरता से आँख गड़ाकर नीलाम की जाने वाली वस्तुओं की सूची पढ़ी। पर फिर फेल रहा।

"क्यों, इसमें तुम्हें घूमनेवाली अलमारी नहीं दिखाई थी? कूड़ा-करकट इकट्ठा करने का तो शौक है उन्हें सजाने का नहीं। यही तो कमी है कि तुम सब टटपूँजिया लेखक सोच नहीं सकते। तुम लोगों में अच्छे बुरे की बुद्धि चुटकी भर नहीं होती।"

मुझे मानना पड़ा कि ढूँढती तो वह है और मनचाही चीज़ मेरी

होती है। कि मेरी पुस्तकालय रूपी प्रयोगशाला कूड़ा करकट है। कि मैं बिना सोचे समझे लिखता हूँ। कि मुझ में बुद्धि नाम भर को नहीं है।

"चीज़ तो अच्छी है।"

"तो अच्छी नहीं, बहुत अच्छी। यह तुम्हारे कमरे में आ गया तो तुम लेखक लगोगे कबाड़ी नहीं।" वह बात काट कर बोली।

"अच्छा बाबा, बहुत अच्छी! पर यह तो बताओ इसके लिये चालीस रुपये कहाँ से लाऊँगा?"

"चालीस रुपये क्यों, उतने का तो नया आ जायगा।"

"नहीं, यह तो पाँच रुपये का छूटेगा।" मैंने चिढ़कर कहा।

"इसकी माँग कहाँ होगी? यह ज़रूर सस्ता छूटेगा।"

"सस्ता तो तब छूटेगा जब नीलामवाले के आदमी उस पर बोली नहीं बढ़ायेंगे।"

"अच्छा, मुझे क्या दोगे यदि मैं इसे दस में ख़रीद कर ला दूँ?"

मैंने भी जोश में आकर कहा, "चलो, तुम्हें इस पर पन्द्रह रुपये तक बोली लगाने की छूट है।"

"तय रहा, लाओ हाथ। देखो फिर पीछे मत हटना।"

मेरे हाथों के तोते उड़ गये। लेकिन दिमाग़ ने दिल को तसल्ली दी— यह पन्द्रह रुपये में नहीं छूट सकता इसलिये तुम्हारे पन्द्रह रुपये बचे हुए हैं। मैं बोला, "हटनेवाले की ऐसी कम तैसी। तुम भी मत भूलना।"

यह परसों की बात थी। आज के अभियान के लिये हम दोनों तैयार हो रहे थे। चलते चलते मैंने फिर पत्नी को याद दिलाया, "देखो पन्द्रह से आगे एक नया पैसा नहीं।" क्योंकि मैं जानता था कि मौके की गरमी

में मनुष्य बहुधा बहक जाता है।

उसने मुझे पन्द्रह का प्रण याद कराया।

एक दूसरे के वादे दुहराते हम नीलाम की दुकान में पहुँचे। वहाँ पता चला कि हमारी घूमने वाली अलमारी के दाम अकेले नहीं लगेंगे, उसके साथ तीन चीज़ और हैं, सबकी एक बोली बुलेगी। वे तीन चीज़ें थीं—एक पुराने स्टाइल की ऊँचे सिरहाने की बारीक काम की काली पालिश की कुरसी, एक तौलिया स्टैण्ड, और एक लोहे का पेपरवेट।

मेरे माथे की सिकुड़नों पर इस्त्री हो गई। चार चीज़ पन्द्रह रुपये में—असम्भव!

घूमनेवाली अलमारी काफी पुरानी और काजू बोजू थी। पत्नी ने राय दी कि एक दो रुपये में वह बिल्कुल नई हो सकती है। उसके लिये वह अन्य कूड़ा भी लेने को तत्पर थी।

पुराना दस्तूर था कि पत्नी का दृढ़निश्चय मुझे हठधर्मी लगता था।

उसने आक्रमण की योजना बनाई। मैं दुकान के दूसरे कोने में चला जाऊँ। अलमारी पर बोली शुरू होते ही हम दोनों पटापट आपस में बोली लगायें जिससे और सब सहम जायँ।

आख़िर बारी आई। बोली आठ से शुरू हुई।

मैंने 'नौ' कहे। दूसरे के कहने से पहले पत्नी ने 'साढ़े नौ' लगाये। मैंने उसी सांस में 'दस' बोल दिये।

बिना किसी रिहर्सल के हमने उस दिन ग़ज़ब ढा दिया। दुकान में सुईगिराऊ शान्ति थी। बल्कि मुझे तो यह डर लग रहा था कि कहीं कोई मनचला मेरे ऊपर हाथ न छोड़ बैठे क्योंकि रमणी से झगड़ने के कारण सब मुझे घूर रहे थे।

मेरे 'बारह' बोलने पर पत्नी चुप हो गई। जो सम्मोहन का परदा

हमने उपस्थित कर दिया था वह कुछ सिकुड़ा।

तभी पत्नी के आगे खड़ी स्त्री ने 'तेरह' कहा।

मैंने बोली बढ़ाई, "चौदह।"

"पन्द्रह।"

साफ था कि हमारी निश्चित सीमा पहुँच चुकी थी। मैं चुप हो गया।

क्षणिक शान्ति के बाद पत्नी बोली, "साढ़े पन्द्रह।"

मैं घबराया। ख़ैर, पचास नये पैसे में कोई बात नहीं।

"सोलह।"

"सवा सोलह।"

"सतरह।"

"सतरह रुपये दस नये पैसे।"

"अठारह ··· उन्नीस।"

"बीस रुपये।" पत्नी की आख़िरी बोली थी और चारों चीज़ें हमारे नाम छूट गईं।

मैं गुस्से में दाँत पीसकर नमक बना रहा था।

सब बोली निमटने पर भीड़ घटी और मुझे पत्नी के पास पहुँचने का अवसर मिला।

"तुम्हारे वादे का क्या रहा?"

"क्यों?" उसने भी भौंहें चढ़ाईं।

"पन्द्रह से आगे बढ़ना।"

"तुम जानते ही हो कि मौके की बात होती है।" वह बड़े शान्त स्वर में बोली।

"हाँ, मौके की बात तो होती ही है।" मैं और जल भुन गया था। "फिर एक स्त्री दूसरी की बोली के सामने झुक जाय यह कैसे हो सकता है।"

उसने मेरी पीठ सी थपथपाई। "अरे, सब ठीक है। तुम समझे नहीं। बोली बोलते समय मैंने उस स्त्री के कन्धे पर से झाँका था। उसके हाथ में नीलाम का परचा था जिस पर कुरसी को रेखांकित कर रखा था और सामने बीस रुपये लिखा था।"

"वह बेचारी समझदार थी। बीस रुपये लिख रखा था, उससे आगे नहीं बढ़ी।"

उसने शैतान निगाहों से मेरी ओर देखा, "काश! तुम्हारी उसके साथ शादी हो जाती।"

मुझे अपना बचाव करना पड़ा, "उसकी ओर तो मैं झांकूँ भी नहीं, पेंटेड गुड़िया!"

"बेचारी को गाली क्यों देते हो?" वह खिलखिला कर हँस पड़ी। "चोर की दाढ़ी में तिनका! मेरा मतलब तो उस जैसी प्रणवीर युवती से था। तुम उससे ही समझ कर मन में लड्डू फोड़ने लगे।"

"ह··· ह··· ह···! अपनी गलती को हँसी में टाल दो।"

"माना कि पहले तो मैं ज़रा जोश में आ गई थी पर।"

"पर क्या?"

"पर मेरा सिर! तुम्हारी समझदारी और दुनियादारी पर से मेरा भरोसा बिल्कुल जाता रहा है।"

"क्यों?"

"अजी बछिया के चचिया! उसने कुरसी पर पेन्सिल चला रखी थी।

फिर हम में उसमें लड़ाई झगड़ा कहाँ था! मैंने उसे टोक दिया और समझाया।"

"अच्छा!" एवरेस्ट की चोटी पर पहुँच कर जो दबाव मालूम होने लगता है वह हमारे सीने पर से यकायक उतर गया।

"लो ये दस रुपये और उसका पता ठेलेवाले को समझा देना, कुरसी उसके घर पर उतारता जायगा।"

मेरी दृष्टि में यदि शक्ति होती तो वह फौरन देवदूत बन जाती। "वाह लम्बू महाराज! अपनी लम्बाई का······"

"हाँ हाँ अपनी प्रशंसा रहने दो। मैं जानती हूँ कि मैं क्या हूँ। और तुम मुझे क्या समझते हो। एक काम करो।"

"बोलो।" मैं अलर्ट अपनी कारगुज़ारी दिखाने को तैयार हो गया।

"अभी तो यहाँ आदमी काफी हैं और वे हैं जिन्हें चीज़ों की ज़रूरत थी और ख़रीदी हैं। अपने पैसे देकर चीज़ें उठवा रहे हैं। ज़रा दौड़कर पूछ फिर जाओ, किसी को बाकी दो चीज़ें तो नहीं चाहियें।"

"मारो गोली।"

"तो मैं पूछ कर आती हूँ। इसमें शर्म की क्या बात है? तुम तो······"

मैं भाग लिया और ठण्डे मीठे शब्द मेरा पीछा कर रहे थे—"······चूड़ियाँ पहन कर घर बसा लो। दो दिन में सारे घर को······"